क्रांति समय
हिन्दी दैनिक अखबार में विज्ञापन, प्रैस नोट, जन्म दिन की शुभकामनाएँ, या अपने विस्तार में किसी भी समस्या को अखबार में प्रकाशित करने के लिए संपर्क करें:-
4-0 ब्लोक, आगाम नवकार कॉम्पलेकक्ष, नीयर सचिन रेल्वे स्टेशन,सचिन, सूरत-394230
मो. 9879141480

दैनिक
क्रांति समय

RNI.No.: GUJHIN/2018/75100

क्रांति समय
हमारे यहां पर एल.आई.सी., कार-बाईक-ट्रक का इन्सयोरेंशन, रेल टिकट, एयर टिकट बनवाने के लिए संपर्क करें:-
4-0 ब्लोक, आगाम नवकार कॉम्पलेकक्ष, नीयर सचिन रेल्वे स्टेशन,सचिन, सूरत-394230
मो. 8980974047

संपादक : सुरेश मौर्या मो. 9879141480
E-mail: krantisamay@gmail.com
सूरत, वर्ष: 1 अंक: 201, मंगलवार, 14 अगस्त, 2018, पेज: 4, मुल्य 1 रु.
ऑफिस:- 191 महादेव नगर, हरि नगर-2 के पीछे, उधना, जिला-सूरत, गुजरात
Email: krantisamay@gmail.com Web site : www.krantisamay.com www.facebook.com/krantisamay1 www.twitter.com/krantisamay1

राहुल बोले- अजब है प्रधानमंत्री मोदी की रोजगार नीति, नाले में पाइप लगाओ और पकौड़े बनाओ

बेंगलुरु।

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने आज कर्नाटक के बीदर में रैली को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पर निशाना साधा। राहुल ने कहा कि यह पीएम मोदी की रोजगार की रणनीति है कि नाले में पाइप लगाकर गैस निकालो और पकौड़े बनाओ। दरअसल राहुल ने यह तंज पीएम मोदी की उस कहानी पर किया है जो उन्होंने कुछ दिन पहले विश्व जैव ईंधन दिवस के मौके पर एक कार्यक्रम के दौरान सुनाई थी। राहुल ने प्रधानमंत्री पर तंज कसते हुए कहा कि करोड़ों नौकरियां देने का वादा करने वाले मोदी अब नाले में पाइप लगा गैस बनाकर पकौड़े और चाय बनाने की सलाह दे रहे हैं। सरकार अब नौजवानों को पकौड़े बनाने के लिए गैस भी नहीं देगी। वहीं कांग्रेस अध्यक्ष ने पीएम मोदी को राफेल पर बहस करने की चुनौती भी दी। उल्लेखनीय है कि 10 अगस्त को पीएम मोदी ने वर्ल्ड बायोफ्यूल डे पर एक किसान और चायवाले का किस्सा कार्यक्रम में मौजूद लोगों के साथ शेयर किया था। उन्होंने बताया था कि एक शख्स नाले के पास चाय का ठेला लगाता था। उसे पता चला कि नाले से गैस निकलती है तो उसने एक छोटे से बर्तन को उल्टा करके नाले पर रख दिया और गटर में एक पाइप डाल दी और दूसरा हिस्सा अपने ठेले तक ले गया और उसी गैस से वो चाय बना लेता था।

कांग्रेस के आरोपों पर पल्लवी जोशी का जवाब, बताए राफेल डील के फायदे

नेशनल डेस्क।

राफेल लड़ाकू विमान डील पर सियासत कम होने का नाम नहीं ले रहा है। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी द्वारा लगाए गए आरोपों के बाद भाजपा और विपक्ष के बीच जुबानी जंग छिड़ गई है। जहां कांग्रेस इस डील को घोटाले का रुप दे रही तो वहीं मोदी सरकार इन सभी आरोपों को खारिज कर रही है। इसी बीच टीवी की जानी-मानी अभिनेत्री पल्लवी जोशी का एक वीडियो खूब सुर्खियां बटोर रहा है। अभिनेत्री ने अपने अंदाज में राफेल डील के फायदों को समझाया है जिसे काफी पसंद किया जा रहा है। भाजपा आईटी सेल के मुखिया अमित मालवीय ने अपने आधिकारिक ट्विटर अकाउंट से इस वीडियो को साझा किया है। जिसमें पल्लवी जोशी समझा रही हैं कि मोदी सरकार ने जो राफेल डील की है, उसमें अच्छी टेक्नोलॉजी के अलावा कई पार्ट्स भारत में ही बनेंगे। इतना सब कुछ होने के बाद भी सरकार ने नई डील में करीब साढ़े 12 हज़ार करोड़ रुपयों की बचत की है। वीडियो में पल लवी जोशी पुराने सेक्रेटरी के बहाने कांग्रेस पर निशाना साध रही हैं। वह यह समझाना चाहती है कि मोदी सरकार ने जो डील की है वह पुरानी सरकार से काफी बेहतर है। वीडियो में पल्लवी ने राफेल डील को हाईटेक लॉक्स के जरिए समझाने की कोशिश की है। उन्होंने कहा कि इस डील से हमें फाइटर प्लेन सस्ते में मिल गए और इसके साथ ही मिसाइल भी मिल गईं, जिससे हम भारत से ही दुश्मन देशों पर दूर तक हमला कर सकते हैं। फाइटर प्लेन के कई पार्ट्स हमारे देश में बनेंगे। अभिनेत्री पुराने सेक्रेटरी के बहाने कांग्रेस पर निशाना साध रही हैं। वह बार-बार पुराने सेक्रेटरी की बात यह बता रही हैं कि मोदी सरकार ने जो डील की है वह पुरानी सरकार से काफी बेहतर है। बता दें कि कांग्रेस का दावा है कि यूपीए सरकार ने जिस विमान की डील की थी, उसी विमान को मोदी सरकार तीन गुना कीमत में खरीद रही है। कांग्रेस ने आरोप लगाया कि इस नई डील में किसी भी तरह की टेक्नोलॉजी के ट्रांसफर की बात नहीं हुई है। पूर्व रक्षा मंत्री एके एंटनी के मुताबिक यूपीए सरकार की डील के अनुसार, 126 में से 18 एयरक्राफ्ट ही फ्रांस में बनने थे ।

पुलवामा में 24 वर्षीय युवक का गोलियों से छलनी शव बरामद, लोगों में दहशत

श्रीनगर । दक्षिण कश्मीर के पुलवामा जिले में आतंकवादियों ने एक नागरिक को अगवा कर उसकी हत्या कर दी। आधिकारिक सूत्रों के अनुसार आज सुबह जिला के बुनपुरा इलाके में लोगों ने गांव के बाहरी छोर पर स्थित बाग में एक युवक का गोलियों से छलनी शव देखा और उसी समय पुलिस को सूचित किया। पुलिस तुरंत मौके पर पहुंची और उसने शव को अपने कब्जे में ले लिया। पुलिस ने दिवंगत के बारे में जब छानबीन की तो पता चला कि वह बुनपोरा के रहने वाले अब्दुल गनी बट का बेटा गुलजार अहमद बट है। पोस्टमार्टम व अन्य कानूनी औपचारिकताओं को पूरा करनेके बाद पुलिस ने दिवंगत का शव उसके परिजनों के हवाले कर दिया है। पुलिस के अनुसार, शुरुआती जांच में पता चला है कि दिवंगत गुलजार अहमद बट जिला अनंतनाग के बीजबेहाड़ा में एक मेडिकल क्लिनिक चलाता था। उसका एक आई क्लिनिक भी था। वह गत शाम साढ़े चार बजे अपने घर लौटा था। उसे आतंकियों ने घर से अगवा किया था या किसी और जगह से अभी इस तथ्य का पता किया जा रहा है। लेकिन बीती रात 10 बजे स्थानीय लोगों ने गांव के बाहरी छोर पर गोलियों की आवाज सुनी थी। लेकिन डर के मारे कोई घर से बाहर नहीं निकला था। आज सुबह जब लोग घरों से बाहर निकले और उस जगह पहुंचे जहां से गोलियों की आवाज आई थी तो उन्हें वहां गुलजार का शव मिला।

करुणानिधि की मौत के बाद परिवार में सत्ता संघर्ष शुरू, अलागिरी और स्टालिन आमने-सामने

चेन्नई। डीएमके प्रमुख एम. करुणानिधि के निधन को अभी सात दिन ही हुए हैं और उनके परिवार में सत्ता को लेकर संघर्ष शुरू भी हो गया है। करुणानिधि के बड़े बेटे एम. के. अलागिरी ने आज पिता के समाधि स्थल पर गए और वहां पर जाकर दावा किया कि पूरा छ्रख्य काडर उनके साथ है। अलागिरी ने स्टालिन को कार्यकारी अध्यक्ष बनाने के फैसले पर भी सवाल उठाए हैं। बता दें कि मंगलवार को डीएमके की अहम बैठक भी होने वाली है और इससे पहले अलागिरी के दावे ने हलचल मचा दी है। सत्ता को लेकर परिवार में संघर्ष बढ़ सकता है। वहीं अलागिरी को दोबारा पार्टी में शामिल किए जाने की मांग तेज हो गई है। उनके समर्थन में सोशलमीडिया में पोस्टर और वीडियो शेयर किए जा रहे हैं। उल्लेखनीय है कि अलागिरी को कुछ साल पहले पार्टी से निकाल दिया गया था और तब से वह पार्टी राजनीति से दूर थे। एक साल पहले ही करुणानिधि के दूसरे बेटे स्टालिन को पार्टी का कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया था।

प्रधानमंत्री मोदी पर विपक्ष का पलटवार, कहा- 2019 में बिखर जाएगा यूनाईटेड

नेशनल डेस्क।

कांग्रेस के नेतृत्व में कुछ विपक्षी दलों ने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के विपक्षी एकता पर हमले के लिए पलटवार करते हुए कहा कि वे एकजुट हैं जबकि सत्तारूढ़ गठबंधन बिखरा हुआ है। विपक्ष ने कहा कि 2019 के आम चुनावों में वे भाजपा को हराएंगे। कांग्रेस, वामपंथी दल और अन्य ने प्रधानमंत्री पर हमला करते हुए कहा कि वह ''घबराहट'' में ऐसा बोल रहे हैं और राजग बिखर रहा है न कि विपक्ष, जो एकजुट है। मोदी ने कुछ मीडिया संस्थानों को दिए साक्षात्कार में कहा कि विपक्ष की एकता निजी अस्तित्व को बचाए रखने के लिए है न कि विचारधारा के समर्थन के लिए है और निजी महत्वाकांक्षाओं के लिए है न कि जन आकांक्षाओं के लिए। उनके साक्षात्कार के बाद विपक्षी दलों के बयान आए हैं। कांग्रेस के मुख्य प्रवक्ता रणदीप सुरजेवाला ने कहा कि विपक्ष की एकता टूटने का प्रधानमंत्री का बयान 'मुंगेरीलाल के हसीन सपने' की तरह है। सच्चाई यह है कि तानाशाह एवं अराजकतावादी जैसे प्रधानमंत्री के खिलाफ पूरा देश एकजुट हो गया है। उन्होंने कहा कि अगर कोई गठबंधन बिखरा है तो राजग का न कि संप्रग का। 2019 में ताश का घर बिखरने वाला है। कांग्रेस प्रवक्ता ने कहा कि भाजपा के सहयोगियों शिवसेना और तेलुगू देशम पार्टी ने उनका साथ छोड़ दिया है और शिरोमणि अकाली दल भी अलग सुर अलाप रहा है। नीतीश कुमार को मनाने के लिए राज्यसभा उपसभापति का पद जनता दल (यूनाईटेड) को दिया गया। राकांपा नेता तारिक अनवर ने कहा कि अगले लोकसभा चुनावों में भाजपा को हराने के लिए विपक्ष की एकता और मजबूत होगी। भाकपा के डी. राजा ने कहा कि विपक्ष की एकता पूरी तरह कायम है और राजग में बिखराव हो रहा है। सुरजेवाला ने कहा कि प्रधानमंत्री ''घबरा'' गए हैं। उनका मूल नारा था भ्रष्टाचार को कतई बर्दाश्त नहीं किया जाएगा जो अब बदलकर हो गया है 'जो लोग भ्रष्टाचार का मुद्दा उठाएंगे उन्हें कतई बर्दाश्त नहीं किया जाएगा।

वैष्णो देवी यात्रा पर भी बारिश असर, रोकी गई बैट्री कार सेवा

जम्मू ।

जम्मू में दो दिन से लगातार बारिश जारी है। विश्व प्रसिद्ध वैष्णो देवी यात्रा भी इससे अछूती नहीं है। बारिश और भूस्खलन के कारण ताराकोट मार्ग पर यात्रा को रोक दिया गया है। वहीं भवन तक जाने वाली बैट्री कार सेवा को भी स्थगित किया गया है। जानकारी के अनुसार बारी बारिश के चलते हिमकोटी मार्ग पर भी यात्रा को स्थगित किया गया है। जानकारी के अनुसार श्रद्धालुओं की सुरक्षा के लिए श्राइन बोर्ड ने बैट्री कार सेवा को स्थगित किया है। एक अधिकारी ने बताया कि मौसम में सुधार के बाद सेवा फिर से शुरू कर दी जाएगी। यात्रियों से भी एहतियात बरतने को कहा गया है। जम्मू में रविवार रात से लगातार बारिश हो रही है।

वहीं दो दिनों से पहाड़ी क्षेत्रों में बारिश का कहर लोगों पर टूटा है। प लैंडहाड़ी क्षेत्रों में भूस्खलन से भी लोगों को परेशानी का सामना करना पड़ रहा है। रियासी और उधमपुर के बीच का सडक़ मार्ग भी लैंडस्लाइड के कारण बंद कर दिया गया है।

अमित शाह ने विधि आयोग को लिखा पत्र: एक साथ चुनाव कराने की वकालत की

नई दिल्ली।

देश में लोकसभा और विधानसभा चुनाव एकसाथ कराने की पुरजोर वकालत करते हुए भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने कहा कि इससे चुनाव पर बेतहाशा खर्च पर लगाम लगाने और देश के संघीय स्वरूप को मजबूत बनाने में मदद मिलेगी। विधि आयोग को लिखे पत्र में शाह ने कहा कि एक साथ चुनाव कराना केवल परिकल्पना नहीं है बल्कि एक सिद्धांत है जिसे लागू किया जा सकता है। भाजपा अध्यक्ष ने कहा कि यह आधारहीन दलील है कि एक साथ चुनाव देश के संघीय स्वरूप के खिलाफ है, उन्होंने कहा कि एक साथ चुनाव कराने से देश का संघीय स्वरूप मजबूत होगा। विधि आयोग को लिखे आठ पन्नों के पत्र में शाह ने कहा कि एक साथ चुनाव कराने का विरोध करना राजनीति से प्रेरित लगता है। उल्लेखनीय है कि एक साथ चुनाव कराने की व्यवहारिकता पर विधि आयोग विचार कर रहा है और वह अपनी रिपोर्ट को अंतिम रूप देने से पहले राजनीतिक दलों के विचार जान रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एक साथ चुनाव कराने के पक्षधर रहे हैं।

सोमनाथ चटर्जी ने मुश्किलों से नहीं मानी कभी हार राजनीतिक सफर

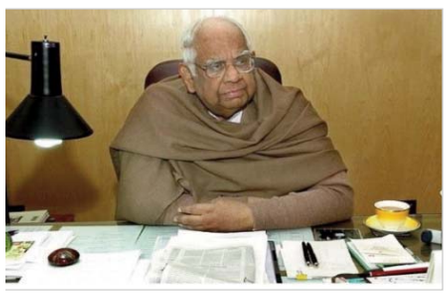

नेशनल डेस्क।

लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष सोमनाथ चटर्जी का निधन हो गया। 89 साल के पूर्व कम्युनिस्ट नेता ने सोमवार सुबह कोलकाता के एक निजी अस्पताल में आखिर सांस ली। सोमनाथ ने राजनीति और पार्टी से ऊपर उठ कर काम किया। वह अपने उसूलों पर चले जिस कारण उन्हे पार्टी ने बाहर का रास्ता दिखा दिया हालांकि इसके बाद भी वह कभी झुके नहीं। आईए जानते हैं राजनीति के दिग्गज नेता सोमनाथ के बारे में कुछ अहम बातें । सोमनाथ चटर्जी का जन्म 25 जुलाई 1929 को असम के तेजपुर में हुआ था। उनके पिता निर्मल चंद्र चटर्जी अखिल भारतीय हिंदू महासभा के संस्थाकों में से एक थे और पेशे से वकील थे। चटर्जी ने कोलकाता और ब्रिटेन में पढ़ाई की। लॉ की पढ़ाई पूरी करने के बाद वाद उन्होंने कलकत्ता हाईकोर्ट में प्रैक्टिस की हालांकि इसके बाद उन्होंने राजनीति में आने का फैसला किया। सोमनाथ चटर्जी ने सीपीएम के साथ राजनीतिक करियर की शुरुआत 1968 में की और 2008 तक इस पार्टी से जुड़े रहे। 1971 में वह पहली बार सांसद चुने गए और इसके बाद उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। चटर्जी 10 बार लोकसभा सदस्य के रूप में चुने गए। कांग्रेस की अगुवाई वाली यूपीए-1 सरकार में वह 2004 से 2009 के बीच लोकसभा के अध्यक्ष रहे थे। हालांकि, 1984 में जादवपुर में ममता बनर्जी से उन्हें हार का सामना करना पड़ा था। उन्होंने लगभग 35 सालों तक एक सांसद के रूप में देश की सेवा की। इसके लिए उन्हें साल 1996 में उत्कृष्ट सांसद पुरस्कार से नवाजा गया। चटर्जी के राजनीति जीवन में उस समय मोड़ आया जब यूपीए-1 शासनकाल में उनकी पार्टी सीपीएम की ओर से सरकार से समर्थन वापस लिए जाने के बाद उनसे स्पीकर पद छोड़ने को कहा गया लेकिन उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया। जिस कारण उन्हें पार्टी से निष्कासित कर दिया गया। जिसके बाद सोमनाथ ने कहा था कि यह उनके लिए सबसे दुखी दिन था। उन्होंने सलाह दी कि भविष्य के स्पीकर अपने दल से इस्तीफा देकर पद पर आसीन हों। चैटर्जी ने अपने अध्यक्षीय कार्यकाल में लोकसभा के शून्य काल का लाइव प्रसारण शुरु कराया। साल 2006 में लोकसभा का प्रसारण 24 घंटे के लिए किया जाने लगा। 4 जून, 2004 को 14वीं लोक सभा के अध्यक्ष के रूप में सोमनाथ चटजी का सर्वसम्मति से निर्वाचन सदन में एक इतिहास रच गया। इस लोकसभा के 17 अन्य दलों ने भी उनका नाम प्रस्तावित किया जिसका समर्थन अन्य दलों के नेताओं द्वारा किया गया। इसके बाद वह निर्विरोध अध्यक्ष निर्वाचित हुए। 22 जुलाई 2008 को विश्वास मत के दौरान किए गए सभा के संचालन के लिए उनको देश के विभिन्न वर्गों के नागरिकों तथा विदेशों से काफी सराहना मिली। उन्होंने प्रणब मुखर्जी के राष्ट्रपति पद पर चुनाव से पहले ही कहा था कि भारत को सबसे योग्य राष्ट्रपति मिलने जा रहा है। सोमनाथ चटर्जी का आदर सभी पार्टियों में था। उन्होंने चटर्जी ने ममता बनर्जी और तृणमूल कांग्रेस की बढ़ती लोकप्रियता को लेकर सीपीएम को आगाह किया था और आखिरकार ममता ने 2011 में सीपीएम को सत्ता से उखाड़ फेंका। चटर्जी ने प्रकाश करात के नेतृत्व वाली सीपीएम की भी आलोचना की थी। साल 2009 में दिग्गज नेता ने राजनीति से सन्यास ले लिया।

संक्षिप्त समाचार

हिजबुल की कश्मीरी बच्चों को धमकी: भारत के स्वतंत्रता दिवस समारोह में ना लें हिस्सा

नई दिल्ली। आतंकवादी संगठन हिजबुल मुजाहिद्दीन ने कश्मीरी छात्रों और उनके परिजनों को धमकी दी है कि वे भारत का स्वतंत्रता दिवस समारोह नहीं मनाएं। एक खुली चुनौती में आतंकवादी संगठन ने कहा कि बच्चों के अभिभावकों को अपने बच्चों को भारत के स्वतंत्रता दिवस समारोह में नहीं भेजना चाहिए। खुले पत्र में हिजबुल ने कहा कि हमारे नोटिस में आया है कि कुछ लोग अपने निजी लाभ के लिए अपने ही भाइयों को दबाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं। उन्होंने भारत के पक्ष में अपना विश्वास बेच दिया है। कुछ लोग भारत के पक्ष में काम कर रहे हैं। पत्र में आगे कहा गया है कि अगर इन लोगों ने अपना रास्ता नहीं बदला तो उनकों गंभीर परिणाम भुगतने होंगे। यह अंतिम चेतावनी है इसके बाद कोई चेतावनी नहीं होगी, कार्रवाई होगी। पत्र में आगे लिखा है कि हम सभी अभिभावकों को यह सूचित करना चाहेंगे कि वे भारत के स्वतंत्रता दिवस समारोह में अपने बच्चों को न भेजें। किसी भी तरह से ऐसी कार्रवाई को बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। स्कूलों और कॉलेजों के प्रमुख हमारे भाई बहिनों को इन समारोह में शामिल होने के लिए बाध्य कर रहे हैं, उन्हें गंभीर परिणामों का सामना करना पड़ेगा।

श्रीनगर और पीओके के बीच कारवां-ए-अमन बस सेवा एक सप्ताह बाद बहाल

श्रीनगर । श्रीनगर और पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर (पीओके) के बीच चलने वाली कारवां-ए-अमन बस सेवा सोमवार को बहाल कर दी गई। गत सप्ताह सुरक्षा कारणों से यह बस सेवा स्थगित कर दी गयी थी। संविधान के अनुच्छेद 35 ए को कमजोर करने के कथित प्रयासों को लेकर अलगाववादियों के गत सोमवार को हड़ताल के आह्वान के मद्देनजर बस सेवा स्थगित कर दी गयी थी। उच्चतम न्यायालय इस अनुच्छेद को चुनौती देने वाली विभिन्न याचिकाओं पर सुनवाई कर रहा है। उच्चतम न्यायालय ने इन याचिकाओं को पांच न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष भेजा जाए या नहीं, इस पर फैसला करने के लिए इस मामले की सुनवाई अगस्त के अंतिम सप्ताह तक के लिए टाल दी है। बस पाकिस्तान लौटने वाले 79 यात्रियों को लेकर सोमवार सुबह श्रीनगर में बेमिना से भारत की अंतिम सैन्य चौकी 'कमान पोस्ट' के लिए रवाना हुई।

गुजरात: अनियंत्रित होकर खाई में गिरी कार, एक ही परिवार के 7 बच्चों की मौत

नेशनल डेस्क। गुजरात के पंचमहाल जिले में एक कार के खाई में गिर जाने के कारण उसमें सवार एक ही परिवार के सात सदस्यों की मौत हो गयी। सभी मृतक नाबालिग हैं। पुलिस ने बताया कि यह हादसा मध्यरात्रि में उस समय हुआ जब यहां से करीब 180 किलोमीटर दूर जंबूघोड़ा तहसील में भट गांव के नजदीक हलोल-बोडेली रोड पर एक तीव्र मोड़ पर 10 लोगों को लेकर जा रही कार का पिछ्ला एक पहिया निकल गया जिस कारण चालक का नियंत्रण खो गया और वाहन सड़क किनारे पानी से भरे एक गड्ढे में गिर गया। जंबूघोड़ा थाना के एक अधिकारी ने बताया कि स्थानीय लोग तीन लोगों को बाहर निकालने में सफल रहे जबकि सात लोगों को नहीं बचाया जा सका। पुलिस अधिकारी ने बताया कि सभी पीड़ित बोडेली शहर में एक ही परिवार के थे वे हलोल में एक रिश्तेदार से मिलने के बाद लौट रहे थे। उन्होंने बताया कि स्थानीय लोगों द्वारा बचाये गये तीन लोगों को जंबूघोड़ा के एक अस्पताल में भर्ती कराया गया है। शवों को पोस्टमार्टम के लिए उसी अस्पताल में ले जाया गया है। अधिकारी ने बताया कि पीड़ितों की पहचान मोहम्मद बिलाल (17), मोहम्मद रऊफ (14), मोहम्मद साजिद (13), गुल अफरोज (13), अनीसा बानो (11), मोहम्मद ताहिर (11) और मोहम्मद यूसुफ (सात) के रूप में की गयी है। दो बच्चों की पहचान तसलीम और परीन के रूप में हुई है, जिसे यहां के निकटतम अस्पताल में भर्ती किया गया है। सभी मृत नाबालिगों को बदेली शहर के छोटा उदयपुर जिले में शाम को दफनाया गया। इस घटना पर शहर को बंद कर दिया गया है। पुलिस ने दुर्घटना के सिलसिले में मामला दर्ज कर लिया है।

खराब मौसम के कारण जम्मू से अमरनाथ यात्रा निलंबित

जम्मू । खराब मौसम के कारण आज जम्मू से अमरनाथ यात्रा निलंबित कर दी गयी। अधिकारियों ने बताया कि भारी बारिश और खराब मौसम के कारण राजमार्ग बंद होने के चलते राज्य की शीतकालीन राजधानी में भगवतीनगर आधार शिविर से तीर्थयात्रा रोक दी गयी। उन्होंने बताया कि जम्मू से तीर्थयात्रियों को अमरनाथ जाने की अनुमति नहीं दी गयी। 60 दिन तक चलने वाली अमरनाथ यात्रा 28 जून को दो मार्गों से शुरू हुयी थी। यात्रा का समापन रक्षाबंधन के दिन 26 अगस्त को होगा। कल शाम तक 2,78,878 तीर्थयात्रियों ने पवित्र अमरनाथ गुफा के दर्शन किए।

मौत के बाद एक किशोरी के अंगदान से तीन लोगों को मिली नई जिंदगी

इंदौर। एक 14 वर्षीय लड़की की मौत के बाद परिजनों ने उसके अंगदान करने का फैसला लेकर रविवार को तीन जरूरतमंद मरीजों को एक नई जिंदगी की सौगात दी। अधिकारियों ने बताया कि हरदा की रहने वाली अंजलि तलरेजा (14) नौ अगस्त को सड़क हादसे में गंभीर रूप से घायल हो गई थी। परिजनों ने उसे इंदौर के एक निजी अस्पताल में भर्ती कराया। लेकिन लगातार इलाज के बाद भी उसकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ और डॉक्टरों ने जांच के बाद रविवार को उसे दिमागी रूप में मृत घोषित कर दिया। उन्होंने बताया कि अंजलि के परिजनों को प्रेरित किया गया, तो वे शोक में डूबे होने के बावजूद अपने दिवंगत स्वजन के अंगदान के लिए राजी हो गए। अधिकारियों ने बताया कि किशोरी के मृत शरीर से निकाला गया लीवर और दोनों किडनी तीन जरूरतमंद मरीजों को प्रत्यारोपित की गईं। इन अंगों को मरीजों तक तेज गति से पहुंचाने के लिए संबंधित अस्पतालों के बीच दो ग्रीन कॉरिडोर बनाए गए।

संपादकीय

आरक्षण की सच्चाई

अन्य पिछड़े वर्गो की जातियों के उपवर्गीकरण की संभावनाओं का पता लगाने के लिए गठित रोहिणी आयोग की ओर से मिले संकेत यदि यह रेखांकित कर रहे हैं कि ओबीसी आरक्षण का लाभ चुनिंदा जातियों ने उठाया है तो इसमें हैरानी नहीं। इस स्थिति को बयान करने वाले आंकड़े उपलब्ध भले न हों, लेकिन हर कोई यह जान रहा है कि हकीकत क्या है। यह विसंगति केवल ओबीसी आरक्षण तक ही सीमित नहीं है। यही हालत अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को मिले आरक्षण में भी है। अब जब ओबीसी आरक्षण में उपवर्गीकरण की दिशा में कदम उठाए जा रहे हैं तो यह जरूरी हो जाता है कि एससी-एसटी आरक्षण में भी ऐसा हो। नीति-नियंता और राजनीतिक दल इससे अनभिज्ञ नहीं हो सकते कि यह आरक्षण में विसंगति अर्थात सभी पात्र जातियों को समुचित लाभ न मिल पाने का ही प्रतिफल है कि जहां ओबीसी की कुछ जातियां अनुसूचित जाति का दर्जा चाह रही हैं वहीं कुछ अनुसूचित जातियां जनजाति के रूप में अपनी गिनती कराना चाहती हैं। ओबीसी आरक्षण का अधिकतम लाभ उठाने वाली जातियां आमतौर पर वही हैं जो सामाजिक एवं आर्थिक रुप से अपेक्षाकृत सक्षम हैं। इन्हें पिछड़ों में अगड़े की संज्ञा दी जा सकती है। अलग-अलग राज्यों में पिछड़ों में अगड़े का दर्जा रखने वाली जातियां भिन्न-भिन्न हैं, लेकिन वे हैं सभी राज्यों में। इनमें से कुछ जातियां तो राजनीतिक रूप से भी प्रभावी हैं। इसके चलते उनका शासन में भी दबदबा है और कहीं-कहीं तो प्रशासन में भी। इसका कोई मतलब नहीं कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक तौर पर प्रभावी जातियां आरक्षण का लाभ उठाती रहें। 1यदि समर्थ जातियों के लोग आरक्षण का लाभ लेते रहेंगे तो वे कहीं न कहीं अन्य ऐसी जातियों के अधिकारों का हरण ही करेंगे जो आरक्षण के दायरे में होने के बावजूद उसके न्यूनतम लाभ से वंचित हैं। समय आ गया है कि न केवल ओबीसी आरक्षण के तहत आने वाली जातियों का उपवर्गीकरण हो, बल्कि उन जातियों को आरक्षण के दायरे से अलग भी किया जाए जो अब आरक्षण का पात्र नहीं रह गई हैं। हालांकि क्रीमी लेयर की व्यवस्था इसी मकसद से की गई है, लेकिन उससे अभीष्ट की पूर्ति नहीं हो पा रही है। पता नहीं ऐसी कोई व्यवस्था एससी-एसटी आरक्षण में क्यों नहीं है? जैसे यह एक तथ्य है कि भारतीय समाज को समरस बनाने के लिए आरक्षण की आवश्यकता है वैसे ही यह भी कि इस व्यवस्था में कई विसंगतियां हैं। आरक्षण का लाभ कुछ समर्थ जातियों के खाते में जाना केवल एक विसंगति है। अन्य विसंगतियों की चर्चा इसलिए नहीं होती, क्योंकि आरक्षण को राजनीतिक रूप से एक नाजुक मसला बना दिया गया है। परिणाम यह है कि कुछ ऐसी जातियां भी आरक्षण की मांग कर रही हैं जो इसके लिए पात्र नहीं हैं। विडंबना यह है कि वे आरक्षण की अपनी मांग मनवाने के लिए हिंसक तौर-तरीके भी अपना रही हैं। बेहतर हो कि ओबीसी जातियों के उपवर्गीकरण की दिशा में आगे बढ़ने के साथ ही आरक्षण की बढ़ती मांगों का भी कोई समाधान निकालने की कोशिश हो। यह कोशिश सामाजिक न्याय की अवधारणा के तहत ही होनी चाहिए।

बयान पर बेवजह विवाद

सामयिक / कुमार नरेन्द्र सिंह

जिन्ना या उनके किसी नजदीकी व्यक्ति के किसी भी भाषण, पत्र, डायरी या दस्तावेज में इस बात का कोई जिक्र नहीं मिलता कि पाकिस्तान के नाम पर देश के बंटवारे की उनकी मांग केवल शिगूफा था। इसके उलट इस बात के अनेक प्रमाण हैं कि उनका उद्देश्य मुसलमानों के लिए एक अलग देश का निर्माण करना था। कुछ विद्वान यह भी बताते हैं कि यदि नेहरू ने 1946 में मुस्लिम बहुल क्षेत्रों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करने एवं कमजोर केंद्रीय सरकार गठित करने की मांग मान ली होती, तो बंटवारे को रोका जा सकता था।

चंद दिनों पहले तिब्बती धर्मगुरु दलाई लामा ने भारत के बंटवारे के लिए जवाहरलाल नेहरू को जिम्मेदार बता कर एक अनावश्यक विवाद पैदा कर दिया है। दलाई लामा का कहना है कि गांधी जी मोहम्मद अली जिन्ना को भारत का प्रधानमंत्री बनाने के लिए तैयार थे, लेकिन नेहरू को यह स्वीकार नहीं था, जिसके चलते देश का बंटवारा हुआ। वैसे यह कोई पहली बार नहीं है, जब भारत के बंटवारे के लिए नेहरू को जिम्मेदार बताया जा रहा है। सच तो यह है कि आजादी के बाद से ही अनेक संगठन और लोग, जिसमें कतिपय देशी-विदेशी विद्वान भी शामिल हैं, बंटवारे का ठिकरा नेहरू के सर पर फोड़ते रहे हैं। यह अलग बात है कि किसी ने भी अंतिम रूप से इसे सिद्ध नहीं किया है। जितने भी तर्क और तय दिए जाते हैं, वे विश्लेषणात्मक और बात से बात निकालने की कवायद ही नजर आते हैं।दलाई लामा का ताजा बयान इस भोजपुरी कहावत को चरितार्थ करते नजर आता है कि ''जेकरा खातिर चोरी कइलीं उहे कहे चोरा' यानी जिसके लिए चोरी की वही अब चोर बता रहा है। आज दलाई लामा की जो हैसियत है, वह मूल रूप से नेहरू की समझदारी और दया का ही प्रतिफल है। बहरहाल, दलाई लामा के बयान को दो स्तरों पर परखने की जरूरत जान पड़ती है तयात्मक और राजनीति जन्य। प्रथम नजर में उनका बयान उस राजनीति का हिस्सा नजर आता है, जिसके अंतर्गत नेहरू को एक खलनायक के रूप में तब्दील करने की साजिश भरी कोशिश चल रही है। वैसे आजादी के पहले से ही कतिपय संगठन इस कोशिश में जुटे हुए हैं। संघ परिवार इस कोशिश का प्रथम और प्रबल प्रणोता रहा है। चूंकि पिछले चार साल से देश की सत्ता पर उसी के राजनीतिक फ्रंट यानी भारतीय जनता पार्टी काबिज है, इसलिए शरणार्थी के रूप में रह रहे दलाई लामा को कई कारणों से आज उसकी ज्यादा जरूरत हो सकती है और है भी। ऐसे में यदि कोई कहता है कि ताजा बयान के पीछे दलाई लामा का मकसद वर्तमान सरकार की सदिच्छा और सहयोग पाने की मंशा से दिया गया है, तो उसे क्योंकर गलत करार दिया जा सकता है। वैसे भी दलाई लामा कोई इतिहासकार नहीं हैं कि उनकी बात को ज्यादा तवज्जो दी जाए। बेहतर होगा कि वह केवल दलाई लामा ही बनें रहें। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि महात्मा गांधी ने 1 अप्रैल, 1947 को तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन को कहा था कि वह जिन्ना को प्रधानमंत्री बनाए जाने का प्रस्ताव दिए थे, जिसे सुनकर स्वयं माउंटबेटन भी स्तब्ध थे। लेकिन साथ में उन्होंने यह शर्त भी जोड़ी थी कि उनकी अगुआई में केवल मुस्लिम लीग सरकार बनाए और उसमें कांग्रेस शामिल नहीं होगी, वह केवल सहयोग करेगी। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सबसे पहले इस प्रस्ताव को स्वयं जिन्ना ने ही खारिज किया था। जहां तक नेहरू की बात है, तो उनकी आपत्ति इस बात पर थी कि मुस्लिम लीग देश के सभी मुसलमानों की प्रतिनिधि पार्टी होने का दावा नहीं कर सकती। इतना ही नहीं, लोकतंत्र में बहुसंख्यक लोगों के आग्रह को कैसे नजरअंदाज किया जा सकता है? सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि कांग्रेस के किसी भी नेता को यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं था। ऐसे में केवल नेहरू को बंटवारे के लिए जिम्मेदार बताना सच कैसे हो सकता है? मोहम्मद अली जिन्ना जानते थे कि फौरी तौर पर वह प्रधानमंत्री बन तो सकते हैं, लेकिन वह उनके लिए अपने ही वादे से मुकरने जैसा होता। वह यह भी जानते थे कि यदि वह प्रधानमंत्री का पद स्वीकार करने के लिए तैयार हो भी जाते हैं, तो मुस्लिम लीग उनके इस कदम का समर्थन नहीं करेगी, क्योंकि अब तक जिन्ना लीग को अलग पाकिस्तान का स्वप्न इतना ज्यादा दिखा चुके थे, कि वह भारत में रहने के उनके निर्णय को स्वीकार नहीं करती। जिन्ना से सहानुभूति रखने वाले यह भी बताते हैं कि उन्होंने मुसलमानों के लिए अधिक रियायत पाने के लिए बंटवारे का शिगूफा छेड़ा था, लेकिन ऐतिहासिक तय उनकी इस बात की कतई पुष्टि नहीं करते। जिन्ना या उनके किसी नजदीकी व्यक्ति के किसी भी भाषण, पत्र, डायरी या दस्तावेज में इस बात का कोई जिक्र नहीं मिलता कि पाकिस्तान के नाम पर देश के बंटवारे की उनकी मांग केवल शिगूफा था। इसके उलट इस बात के अनेक प्रमाण हैं कि उनका उद्देश्य मुसलमानों के लिए एक अलग देश का निर्माण करना था। कुछ विद्वान यह भी बताते हैं कि यदि नेहरू ने 1946 में मुस्लिम बहुल क्षेत्रों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करने एवं कमजोर केंद्रीय सरकार गठित करने की मांग मान ली होती, तो बंटवारे को रोका जा सकता था। इस तर्क से दो सवाल उठते हैं। पहला तो यह कि तत्कालीन राष्ट्रीय और भू-राजनीतिक स्थितियों के मद्देनजर केंद्र में एक कमजोर सरकार व्यावहारिक था? दूसरा कि तत्कालीन परिस्थितियों में अधिक स्वायत्तता प्रदान करने के बाद क्या देश की अखंडता के लिए खतरे की आशंका नहीं उभरती? इन दोनों सवालों का उत्तर यही हो सकता है कि ऐसा करना न तो व्यावहारिक था और न वांछनीय। मालूम हो कि इन तमाम निर्णयों में कांग्रेस ही नहीं, गांधी जी भी पूरी तरह नेहरू के साथ थे। जहां तक मुस्लिम लीग की बात है, तो वह शुरू से ही मुसलमानों के लिए एक अलग राष्ट्र की रूपरेखा बनाने में जुटा हुआ था। उसने 1940 में ही कांग्रेस के सामने एक प्रस्ताव पेश किया था, जिसमें आजादी के बाद भारत के बंटवारे की योजना बताई थी। जहां तक कांग्रेस की बात है, तो यह सत्य है कि उसने मुसलमानों की चिंता दूर करने का कभी विशेष प्रयास नहीं किया। सर्वविदित है कि कांग्रेस के भीतर भी हिन्दुवादियों का एक सशक्त समूह था, जो मुसलमानों से नफरत करता था। कांग्रेस आंदोलन के मुहावरे और व्यवहार दोनों ही हिन्दू समर्थक परिलक्षित होते रहे। इसे जिन्ना समेत कई मुस्लिम नेताओं ने रेखांकित किया है, लेकिन आजादी की आड़ में इस विरोधाभास को समाप्त करने की कोई कोशिश नहीं की गई। सच तो यह है कि देश के बंटवारे के लिए मूल रूप से हिन्दुओं और मुसलमानों के अभिजात्य तबके में एक-दूसरे के लिए अविास ही जिम्मेदार था, जिसे मुस्लिम लीग, हिन्दू सभा और अन्य कम्युनल संगठन लगातार बढ़ाते रहे थे। दोनों तबके का अभिजात्य वर्ग अपने लिये सुरक्षित सत्ता केंद्र की चाहत रखता था। 16 अगस्त, 1946 में जिन्ना द्वारा किए गए डाइरेक्ट एक्शन डे के आह्वान के बाद, जिसमें सिर्फ तीन दोनों के अंदर ही 5000 लोग मारे गए, मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच समझौते की सारी गुंजाइश जाती रही। अविास और हिंसा से बचने का अब एक ही रास्ता रह गया था और वह था देश का बंटवारा।

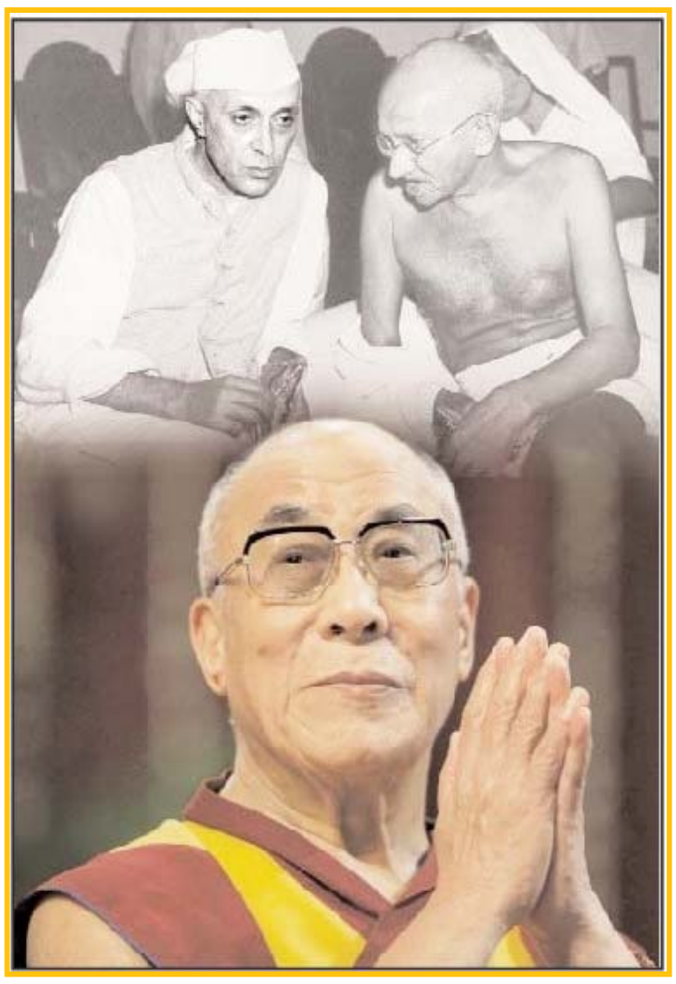

आज का राशीफल

आज का राशिफल

मेष व्यावसायिक योजना सफल होगी। किया गया परिश्रम सार्थक होगा। धन, पद, प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी। यात्रा देशाटन की स्थिति सुखद व लाभप्रद होगी। ससुराल पक्ष से लाभ होगा। धार्मिक प्रवृत्ति में वृद्धि होगी।

वृषभ बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। रुका हुआ कार्य सम्पन्न होगा। शासन सत्ता का सहयोग मिलेगा। प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता मिलेगी। वाहन प्रयोग में सावधानी रखें। धन लाभ होगा।

मिथुन पारिवारिक जीवन सुखमय होगा। पिता या उच्चाधिकारी का सहयोग मिलेगा। वाणी पर नियंत्रण रखकर वाद विवाद की स्थिति को टाला जा सकता है। संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलेगा।

कर्क आर्थिक संकट का सामना करना पड़ेगा। व्यावसायिक योजना सफल होगी। भाग्यवश कुछ ऐसा होगा जिसका आपको लाभ मिलेगा। स्वास्थ्य शिथिल होगा। विरोधी परास्त होंगे। व्यर्थ की भागदौड़ रहेगी।

सिंह प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता के योग हैं। उदर विकार या त्वचा के रोग से पीड़ित रहेंगे। शासन सत्ता का सहयोग मिलेगा। अधीनस्थ कर्मचारी से तनाव मिलेगा। प्रणय संबंध प्रगाढ़ होंगे।

कन्या दाम्पत्य जीवन सुखमय होगा। जीवनसाथी का स्वास्थ्य प्रभावित हो सकता है। आय और व्यय में संतुलन बना कर रखें। खान पान में संयम रखें। यात्रा देशाटन की स्थिति सुखद व लाभप्रद होगी।

तुला आर्थिक पक्ष मजबूत होगा। शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिलेगी। आय और व्यय में संतुलन बना कर रखें। प्रणय संबंधों में कटुता आ सकती है। विरोधियों का पराभव होगा।

वृश्चिक आर्थिक दिशा में किए गए प्रयास सफल होंगे। संतान के दायित्व की पूर्ति होगी। पिता या उच्चाधिकारी का सहयोग मिलेगा। नेत्र विकार की संभावना है। धन, पद, प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी।

धनु पिता या उच्चाधिकारी का सहयोग मिलेगा। उपहार व सम्मान का लाभ मिलेगा। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। भाई या पड़ोसी से वैचारिक मतभेद हो सकते हैं। ससुराल पक्ष से लाभ मिलेगा। धन लाभ की संभावना है।

मकर पारिवारिक जनों का सहयोग मिलेगा। उपहार व सम्मान का लाभ मिलेगा। पिता या उच्चाधिकारी का सहयोग मिलेगा। स्थानान्तरण व परिवर्तन के योग हैं। आय के नवीन स्त्रोत बनेंगे।

कुम्भ शिक्षा प्रतियोगिता के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिलेगी। जीविका के क्षेत्र में प्रगति होगी स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। वाणी पर नियंत्रण रखने की आवश्यकता है। धार्मिक प्रवृत्ति में वृद्धि होगी।

मीन पारिवारिक जीवन सुखमय होगा। संतान के दायित्व की पूर्ति होगी। वाणी पर नियंत्रण रखें। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। मनोरंजन के अवसर प्राप्त होंगे। वाहन प्रयोग में सावधानी रखें।

अमेरिकी कूटनीतिक चाल से प्रभावित तुर्की की नाराजगी के मायने

(लेखक- डॉ हिदायत अहमद खान)

तुर्की के राष्ट्रपति रजब तैयब इरदुगान का अमेरिका पर लगाया गया आरोप बहुत ही गंभीर और मायनेखेज है। जब राष्ट्रपति इरदुगान यह कहते हैं कि अमेरिका महज एक पादरी की वजह से तुर्की को घुटनों पर लाने की कोशिश कर रहा है, तो सवाल खड़े हो जाते हैं कि कानूनी प्रक्रिया अपनाने की बजाय क्या कोई देश किसी दूसरे देश के खिलाफ इस तरह की कूटनीतिक चाल भी चल सकता है? दरअसल 2016 में नाकाम तख्तापलट के साजिशकर्ताओं में शामिल होने के आरोपी पादरी एंड्र्यू तुर्की की हिरासत में हैं। मामला चूंकि तुर्की की सरकार से जुड़ा हुआ है अत- अमेरिका ने उनकी रिहाई की मांग करते हुए सरकार पर दबाव बनाने का काम भी शुरु कर दिया है। इसके मद्देनजर तुर्की द्वारा बताया जा रहा है कि इसी साजिश के तहत ही अमेरिका ने स्टील और एल्युमिनियम पर आयात कर को बढ़ाकर दोगुना कर दिया है। अमेरिका के ऐसा करने से तुर्की की मुद्रा लीरा में अमेरिकी डॉलर के मुकाबले 16 फीसदी की गिरावट दर्ज की गई है। अब यह अंतर्राष्ट्रीय व्यापारिक प्रतिस्पर्धा का परिणाम है या फिर वाकई कूटनीतिक साजिश का हिस्सा, जिससे तुर्की इस कदर बौखलाया हुआ है। यह तो जांचने और परखने के बाद ही तय हो पाएगा कि असल बात क्या है। वैसे देखा जाए तो विश्वमंदी के दौर से निकलने की कोशिश में अनेक बार विकसित देशों द्वारा इस प्रकार के प्रयोग बहुतायत में किए गए हैं, लेकिन वो कुछ समय के लिए ही होते थे, जिससे तमाम प्रभावित देश किसी न किसी तरह छुटकारा पा ही लेते थे। यहां तुर्की मामले में चूंकि बात ट्रंप से जुड़ी हुई है अत- यह भी याद दिलाने की आवश्यकता है कि जब ट्रंप राष्ट्रपति चुने गए थे तो उन्होंने साफ शब्दों में कह दिया था कि वो संबंध तो सभी देशों से अच्छे रखना चाहेंगे, लेकिन अमेरिका को नंबर वन पर रखकर ही बात या संबंध बनाएंगे। चूंकि अमेरिका को उन्हें भविष्य में भी नंबर वन में ही रखना चाहते हैं अत- ये प्रयोग तो होंगे ही। सबसे पहले अमेरिका और उसके नागरिकों की बात करने वाले ट्रंप अब अपनी नीतियों के लिए दुनियाभर में ख्यात हैं। अमेरिकी व्यापार और कारोबार को लाभांवित करने के इरादे से ही इस तरह की कूटनीतिक चाल चली गई है और इसी बहाने उन्होंने पादरी मामले को भी निपटाने की कोशिश कर ली। मतलब एक तीर से दो निशाने साधे गए हैं। इसलिए यहां बताते चलें कि अमेरिका तुर्की ही नहीं बल्कि अन्य देशों जिसमें भारत और चीन जैसे देश भी शामिल हैं के विरुद्ध यही चाल चलता नजर आया है। जहां तक अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा ट्वीट करते हुए पादरी ब्रुसन की रिहाई की मांग करने का सवाल है तो वो पादरी के प्रति उनका व्यक्तिगत लगाव भी हो सकता है। बहरहाल आरोपों के चलते गिरफ्तार शख्स के लिए देश की नीति में बदलाव करने जैसी प्रक्रिया को अपनाना अमेरिकी कारोबार को हानि भी पहुंचा सकता है। वैसे ट्रंप ने जो ट्विट किया था उसे देखने के बाद तो यही लगता है कि अमेरिका ने वाकई पादरी ब्रुसन की गिरफ्तारी को गंभीरता से लिया है। दरअसल ट्रंप ने ट्विट करते हुए कहा कि %ब्रुसन जैसे महान क्रिश्चियन, फ़ैमिली मैन और बेहतरीन इंसान को इतने लंबे समय से हिरासत में रखने की वजह से अमेरिका तुर्की पर कड़ी पाबंदियां लगाएगा। ब्रुसन जैसे बेकसूर शख़्स को तुरंत रिहा किया जाना चाहिए।% इसलिए इस पूरे मामले को सीरिया से भी जोड़कर देखा जा रहा है। गौरतलब है कि सीरिया मामले में तुर्की ने जहां रुस से नजदीकियां बढ़ाईं थीं वहीं अपनी नीतियों में भी बदलाव करके उसका साथ देता दिखाई दिया था। इस कारण भी अमेरिका की भृकुटियां तनी हुईं हैं और ऐसे में वह भूल गया कि तुर्कि कोई और देश नहीं बल्कि %नेटो% का सहयोगी भी है। ऐसे में तुर्की राष्ट्रपति इरदुगान का आपा खो जाना हैरान नहीं करता। अमेरिका को आंख दिखाते हुए इरदुगान कह रहे हैं कि %आप हमारे देश को धमकियों की भाषा से कभी नहीं झुका सकते। हमने न कभी इंसाफ़ से समझौता किया है और न आगे कभी करेंगे।% वैसे अमेरिका के संबंध में यह जरुर कहा जा सकता है कि उसने अभी तक व्यक्ति विशेष को ही निशाना बनाकर अनेक देशों की ईंट से ईंट बजाकर रख दी है। फिर चाहे वो इराक का मामला रहा हो या फिर अफगानिस्तान और सीरिया और उत्तर कोरिया का। इन तमाम देशों में एक व्यक्ति को निशाना बनाते हुए युद्ध थोपने जैसे हालात पैदा किए गए। अगर यकीन नहीं आता तो देखें कि किस तरह से इराक मामले को सद्दाम हुसैन तक सीमित रखा गया। इसके बाद अफगानिस्तान में तालिबान को निशाना बनाते हुए ओसामा बिन लादेन पर केंद्रित कर दिया गया। इसके बाद सीरिया के राष्ट्रपति बशर अल असद को हटाने के लिए युद्ध थोपा गया, लेकिन यहां रुस ने खेल बिगाड़ दिया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि राष्ट्रपति असद ने रुस से सैन्य सहायता मांग ली और समय रहते रुसी सेना ने हस्तक्षेप कर मामले को पलट दिया। इसी तरह जब हम बात उत्तर कोरिया की करते हैं तो यहां पर भी किम जॉग उन को प्रमुख तौर पर निशाना बनाया गया, लेकिन यहां भी समय रहते चीन से उत्तर कोरिया की नजदीकियां बढ़ीं और किम जॉग उन ने रणनीति के तहत वार्ता का प्रस्ताव रख बाजी को पलट दिया। इस प्रकार देखने में आता है कि अमेरिका एक शख्स को निशाना बनाकर भी कूटनीतिक चालें चल सकता है। इसलिए तुर्की को सतर्क रहने की आवश्यकता है और इसका तोड़ भी उसे तलाश करना ही होगा, वर्ना हालात और भी बद से बदतर हो सकते हैं। इसके लिए सबसे बेहतर तरीका तो यही है कि बातचीत के रास्ते खोले जाएं और जिस मामले को अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप अहम बता रहे हैं उस पर विचार करते हुए जांच एजेंसियों को जवाब देने के लिए तैयार किया जाए। अंतत- यह सभी जानते हैं कि अमेरिका के सामने तुर्की की नाराजगी किसी काम आने वाली नहीं है, क्योंकि वो जब चाहेगा सख्त से सख्त पाबंदियां आयद कर उसे घुटनों में अवश्य ही ले आएगा।

विचार मंथन

क्या कहते हैं गरम होती धरती के बढ़ रहे अग्निकांड

महेंद्र राजा जैन, वरिष्ठ हिंदी लेखक

हाल में ही ग्रीस में लगी भयंकर आग में 87 लोग जलकर मर गए और 100 से अधिक लोगों का कुछ पता नहीं चला। यह आग पूरी तरह अप्रत्याशित थी। यह पिछले एक वर्ष में कनाडा से लेकर पुर्तगाल और जापान तक में हुए कई उन अग्निकांडों में से एक है, जिन्हें जलवायु परिवर्तन का नतीजा माना जा रहा है। हालांकि कई वैज्ञानिकों का अध्ययन बताता है कि केवल जलवायु परिवर्तन ही इनका अकेला कारण नहीं है। शहरीकरण और भू-उपयोग के बदलते तरीके भी इसका कारण हैं। यूरोपीय संघ द्वारा तैयार किए गए आंकड़ों के अनुसार केवल यूरोप में ही इस वर्ष अभी तक 450 जगह तीन लाख वर्गमीटर क्षेत्र में आग लग चुकी हैं, जो पिछले एक दशक में हुए अग्निकांडों के मुकाबले 40 प्रतिशत अधिक है। केवल स्वीडन के जंगलों में 65 जगह आग लग चुकी हैं। ब्रिटेन की दलदली जमीन में नमी रहती है, लेकिन वहां पर भी कई जगह आग लगी है। हम चाहें, तो भारत के उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश वगैरह के जंगलों में लगनी वाली आग को भी इसमें गिन सकते हैं। तस्मानिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेविड बोमेन के अनुसार, दुनिया भर में ऐसे भंयकर अग्निकांड में एकाएक वृद्धि हुई है। पिछले वर्ष लास एंजिल्स के उप-नगरीय इलाकों के साथ ही चिली में लगी आग को वह सामान्य नहीं मानते। ग्रीस में इस वर्ष आग लगने के पहले वहां जितनी गरमी थी, उतनी पहले कभी नहीं रही। पर वहां आग फैलने का मुख्य कारण बने अवैध मकान, तेज हवा और प्रशासन की उपेक्षा। सूखा और गरमी ज्यों-ज्यों बढ़ती जा रही है, ऐसी आग लगने का खतरा बढ़ता जा रहा है। जलवायु परिवर्तन और विनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं का चोली-दामन का संबंध माना जाता है। लंदन स्थित दुनिया की सबसे बड़ी बीमा कंपनी लॉयड्स का अनुमान है कि जलवायु परिवर्तन के साथ ही बाढ़ और अंधड़ से होने वाली घटनाओं के कारण इस वर्ष 123 अरब डॉलर की क्षति होने का खतरा है। 2015 में नेचर पत्रिका द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार जलवायु परिवर्तन का सीधा प्रभाव दुनिया भर में लोगों की आमदनी पर पड़ेगा, जो सन 2100 तक एक-चौथाई कम हो जाएगी। दो वर्ष पहले पेरिस में 170 देशों ने जलवायु समझौता किया था कि वे दो सेंटीग्रेड तक ग्लोबल वार्मिंग कम करेंगे, उस पर बहुत से देशों ने अभी तक कुछ भी नहीं किया। अब चिंता इस बात की है कि अगर दुनिया दो सेंटीग्रेड और गरम हो गई, तो क्या होगा? अभी तक के अध्ययन दो सेंटीग्रेड के आधार पर किए गए हैं। यह माना जा रहा है कि इससे उत्पादकता तेजी से कम होगी और कई देशों की विकास दर यानी जीडीपी तेजी से गिरेगी। बड़ी संख्या में लोगों का विस्थापन और पानी की कमी के कारण संघर्षों में वृद्धि तो जानी-मानी बात है।

वैसे लोग मानने लगे हैं कि अभी तक जो आंकड़े और अनुमान प्रस्तुत किए गए हैं, स्थिति शायद उससे भी कहीं ज्यादा खराब होगी, पर नेचर के एक अन्य अध्ययन के अनुसार औसत दृष्टि से कहा जा सकता है कि भूमध्य रेखा के नजदीक के गरीब देशों की अपेक्षा उत्तरी गोलार्द्ध के देशों पर इसका प्रभाव कम पड़ेगा। पर कुछ देश इससे लाभान्वित भी होंगे, जैसे कि स्वीडन जैसे देश। जलवायु परिवर्तन से वहां धूप अधिक मिलेगी और जंगल जल्दी-जल्दी बढ़ेंगे, जिससे वहां के लकड़ी के उद्योग का संवर्द्धन होगा। वर्ल्ड बैंक की सीनियर अर्थशास्त्री स्टेफनी हाल्गेट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन का प्रभाव इस बात से आंका जाएगा कि लोग कितनी जल्दी उसके हिसाब से अपने आप को ढाल पाएंगे। पर जलवायु परिवर्तन के अन्य नतीजों जैसे आग लगने की घटनाओं के अनुरूप अपने को ढालना आसान नहीं है। विशेषकर तब जब कि खतरों की अनिश्चितता है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि पार्क, गोल्फ कोर्स आदि से खतरा कम किया जा सकता है।

पर सही बात तो यह है कि अब इस विषय पर वाद-विवाद करने का समय नहीं है। आग से बढ़ते खतरों की ओर अभी भी बहुत से देश गंभीरता से नहीं सोच रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप हमें आने वाले समय में आग से और भी अधिक धन-जन की हानि देखने के लिए तैयार रहना चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

संक्षिप्त

डीएम का घेराव करने जा रहे छात्रों को पुलिस ने रोका

सोनभद्र, चुर्क स्थित राजकीय इंजीनियरिंग कालेज में पानी न होने सहित अन्य समस्याओं को लेकर सैकड़ों की संख्या में छात्र रविवार की देर रात डीएम आवास घेरने जा रहे थे। इस दौरान लोढ़ी स्थित वाराणसी-शक्तिनगर मार्ग पर बने गेट पर ही पुलिस ने उन्हें रोक दिया। इससे आक्रोशित होकर छात्र सड़क पर बैठ गए। उनका कहना था कि वे इस समस्या को डीएम से बताएंगे। कहा कि कालेज के हास्टल में एक पखवाड़े से पानी नहीं आ रहा है। इससे हम लोगों की दिनचर्या प्रभावित हो गई। इस बड़ी समस्या को लेकर कई बार कालेज के प्राचार्य से शिकायत की गई लेकिन कोई ध्यान नहीं दिया गया। इसके अलावा काफी समस्या है जिससे हम लोगों को परेशान होना पड़ रहा है। इस दौरान पुलिस ने उन्हें समझाया। कहा कि जल्द ही समस्या का समाधान हो जाएगा। हालाकि छात्र कुछ सुनने को तैयार नहीं थे। वहा पहुंचे एसडीएम घोरावल राजकुमार ने आश्वासन देकर छात्रों को हटाया।

हादसे में भाजपा कार्यकर्ता की मौत

रानीगंज(प्रतापगढ़), रानीगंज थाना क्षेत्र के भागीपुर गांव निवासी मनीष कुमार मिश्र उर्फ टिंकू (३५) बाइक से शाम घर से रानीगंज के लिए निकला और फतनपुर में ढाबे पर जा पहुंचा। वहां से खाने पीने के बाद वह रात में बाइक से घर जा रहा था, जैसे ही रामापुर ओवरब्रिज से नीचे उतरा कि हाईवे पर रामापुर चुरहट्टी गांव के पास खड़ी ट्रक में बाइक लेकर टकरा गया। जिससे उसकी मौत हो गई। पोस्टमार्टम के बाद रविवार को शाम शव घर पहुंचा तो मृतक मनीष की पत्नी निगीता व मां अरुणा समेत अन्य परिजनों की रो-रो कर हालत खराब हो गई। मनीष भाजपा का कार्यकर्ता था। उसकी मौत पर भाजपा के वरिष्ठ नेता हरिमंगल तिवारी, नगर पंचायत अध्यक्ष के पति बद्री प्रसाद गुप्ता, विक्रम सिंह के अलावा कांग्रेस के युवां जिलाध्यक्ष सूरज त्रिपाठी आदि उसके घर पहुंचे।

भ्रष्टाचार के खिलाफ कांग्रेस का प्रदर्शन आज

फैजाबाद, राफेल लड़ाकू विमान में भाजपा सरकार पर भ्रष्टाचार का आरोप लगा कांग्रेस मंगलवार को गांधी पार्क में प्रदर्शन कर धरना देगी। जिला कांग्रेस उपाध्यक्ष एवं प्रवक्ता शीतला पाठक ने बताया कि इसके लिए जिला एवं महानगर कांग्रेस कमेटी के समस्त पदाधिकारियों, एआईसीसी एवं पीसीसी सदस्यों, फ्रंटल संगठनों के अध्यक्ष एवं उनके पदाधिकारियों को 14 अगस्त को सुबह 11 बजे कांग्रेस कार्यालय कमला नेहरू भवन पर एकत्रित होने को कहा गया है। वहां से खिलाफ रिकाबगंज चौराहा होते हुए गांधी पार्क पहुंचेंगे। जिलाधिकारी के माध्यम से महामहिम राष्ट्रपति को संबोधित ज्ञापन सौंपा जाएगा।

ट्रेन से गिरकर युवक की मौत

ताराजीवनपुर (चंदौली), अलीनगर थाना क्षेत्र के नसीरपुर गांव के समीप रेलवे यार्ड में किसी ट्रेन से गिरने से युवक की मौत हो गई। सूचना पर पहुंची पुलिस ने शव को कब्जे में लेकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया । क्षेत्र के नसीरपुर पट्टन गांव के समीप रेलवे यार्ड में किसी ट्रेन से गिरने से 20 वर्षीय युवक की मौत हो गई। सूचना पर पहुंची पुलिस ने उसके जेब से मिले कागजात के आधार पर उसकी पहचान रंजना पासवान ग्राम धनपुरा दिनारा रोहतास बिहार के रूप में की। पुलिस ने शव को कब्जे में लेकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया।

शिक्षक ने लेखपाल को रिवाल्वर लेकर दौड़ाया

रामपुर (जौनपुर), मड़ियाहूं तहसील में कार्यरत लेखपाल रणजीत सिंह यादव ने मड़ियाहूं कोतवाली में तहरीर देकर एक शिक्षक पर रिवाल्वर लेकर दौड़ाने का आरोप लगाया है। तहरीर में लेखपाल ने लिखा है कि सुबह वे रानीपुर स्थित अपने आवास पर बैठे थे। उसी समय देवापार गांव निवासी दबंग शिक्षक कार से तीन साथियों के साथ आए। उसी गांव के मेरे पास जांच के लिए आए एक प्रकरण में गलत रिपोर्ट लगाने के लिए दबाव बनाने लगे। इनकार करने पर गाली देते हुए अपनी लाइसेंसी रिवाल्वर निकालकर मारने के लिए दौड़ा लिया। आवास में भाग कर मैंने जान बचाई। कुछ लोगों ने बीच-बचाव कर उन्हें हटाया। लेखपाल के प्रार्थना पत्र पर उप जिलाधिकारी मोती लाल यादव ने प्रभारी निरीक्षक मड़ियाहूं को प्राथमिकी दर्ज कर आवश्यक कार्रवाई करने का निर्देश दिया।

मार्ग दुर्घटना में बाप-बेटे की दर्दनाक मौत

सिद्धार्थनगर, भवानीगंज थाना अंतर्गत भड़रिया निवासी बाप बेटे की सड़क हादसे में दर्दनाक मौत हो गई। घटना रविवार रात्रि की है। पिता सफाई कर्मचारी पद पर तैनात था। गांव निवासी (३०) सुभाष गुप्ता पुत्र सदन तहसील क्षेत्र के परसोहिया सदानन्द गांव में सफाई कर्मी के पद पर कार्यरत था। उसकी महुआ बाजार थाना कोतवाली उतरौला बलरामपुर में दुकान भी थी। रात्रि में सुभाष अपने (१३) बेटे शोभित के साथ मोटर साइकिल पर बैठकर दुकान से घर आ रहे थे। भड़रिया-महुआ के बीच बौड़िहार बाजार के पास अभी पहुंचे थे, कि किसी ट्रक ने जोरदार टक्कर मार दी। जिससे पिता-पुत्र दोनों की मौके पर मौत हो गई।

छात्रा ने फांसी लगाकर दी जान

संडवा चंद्रिका (प्रतापगढ़), अंतू थाना क्षेत्र के बंडा खुटार गांव में सुबह घर में रही हाईस्कूल की छात्रा ने फांसी लगाकर जान दे दिया। उक्त गांव निवासी रत्ना वर्मा (१५) पुत्री राम सजीवन वर्मा हाईस्कूल की छात्रा थी। घर पर वह माता-पिता के साथ रहती थी। रविवार की सुबह माता पिता खेत में काम करने चले गए थे। रत्ना घर में अकेली थी। सुबह कमरे का दरवाजा बंद करके रत्ना स्टूल पर चढ़ी और पंखे के चुल्ले में दुपट्टा का फंदा बनाकर फांसी लगाकर जान दे दिया। घटना के घंटे भर बाद जब माता-पिता खेत से घर आए तो दरवाजा अंदर से बंद था। आवाज देने पर दरवाजा नहीं खुला तो वह परेशान हो गए। शोर मचाने पर गांव वाले भी इकट्ठे हो गए। दरवाजा तोड़कर अंदर गए तो देखा कि रत्ना फांसी के फंदे पर झूल रही थी। परिजनों ने उसे नीचे उतारा। एसओ संजय यादव ने बताया कि किशोरी ने फांसी लगाकर आत्महत्या की है। घटना की जांच की जा रही है।

अयोध्या में बनेगा राम मंदिर, हटेगी धारा ३७०-वेदांती

अयोध्या (फैजाबाद), 2019 के लोस चुनाव से पूर्व रामजन्मभूमि पर मंदिर बनेगा एवं कश्मीर से धारा 370 भी हटेगी। यह दावा किया, पूर्व सांसद एवं रामजन्मभूमि

न्यास के सदस्य डा. रामविलासदास वेदांती ने। उन्होंने कहा कि इस संबंध में उनकी प्रधानमंत्री से बात भी हो चुकी है। पूर्व सांसद ने प्रधानमंत्री सहित मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की प्रशंसा भी की और कहा, इनके रहते राष्ट्रवादियों को हताश होने की जरूरत नहीं है। इससे पूर्व उन्होंने मंदिर के समर्थन में अभियान चलाने वाले बब्लू खान एवं मिशन मोदी अगेन पीएम संगठन से जुड़े शरद पाठक बाबा के नेतृत्व में कश्मीर के लालचौक पर 15 अगस्त को तिरंगा फहराने के लिए जत्थे को रवाना किया। इस जत्थे में डेढ़ दर्जन हिंदू एवं दो दर्जन मुस्लिम शामिल हैं। निकलने से पूर्व यात्रा में शामिल दोनों समुदाय के लोगों ने रामलला का दर्शन किया। इस मौके पर बब्लू खान ने कहा, राममंदिर के निर्माण का दूसरा पहलू राष्ट्र मंदिर का निर्माण है और इसी भावना एवं उद्देश्य के तहत वे कश्मीर जा रहे हैं, जहां न केवल कश्मीर बल्कि पाक अधिकृत कश्मीर को मिलाकर देश की एकता-अखंडता का आह्वान किया जाएगा। यात्रा संयोजक शरद पाठक ने कहा, यह देश की अखंडता के लिए मात्र सवा तीन दर्जन लोगों की ही नहीं बल्कि सवा सौ करोड़ भारतीयों की एकजुटता का संदेश है। इस मौके पर रामजन्मभूमि समन्वय समिति के अध्यक्ष आचार्य नारायण मिश्र भी मौजूद रहे।

संपर्क मार्ग पानी से डूबा, आवागमन बाधित

रौनापार (आजमगढ़), सगड़ी क्षेत्र के देवाराचंल में बहने वाली घाघरा नदी का जलस्तर दूसरे दिन घटा। जैसे-जैसे घाघरा घट रही है वैसे-वैसे कटान तेज होती जा रही है। घटने के बाद भी जलस्तर डिघिया गेज पर 64 सेमी ऊपर बह रहा है। डूबे हुए संपर्क मार्गों से अभी भी पानी नहीं हट सका है। देवारावासियों का आवागमन बाधित है। वहीं त्रिलोकी के पुरा में त्रिलोकी पटेल व फूलबदन पटेल का मकान घाघरा के जद में है। कभी भी कटान हो सकती है। परिवार के लोग घर छोड़ कर पलायन कर चुके हैं। महराजगंज ब्लाक के अराजी सेमरी में प्राथमिक विद्यालय की चहारदीवार को घाघरा काट रही है। तटवर्ती गांवों की फसल पूरी तरह डूबी हुई है। जहां पशुओं के चारे के लिए परेशानी हो रही है वहीं नदी के घटने से संक्रमित बीमारियां फैलने का खतरा बना हुआ है। खरैलिया से सोनौरा, मानिकपुर से मानिकपुर नई बस्ती, शाहडीह से बाका, हाजीपुर से चक्की हाजीपुर संपर्क मार्ग पर पानी होने से आवागमन बाधित है। कमर से ऊपर पानी घुसकर लोग जा रहे हैं। जिला प्रशासन द्वारा देवारा क्षेत्र पांच नाव लगाई गई है। जिसमें चक्की हाजीपुर में तीन, बांका में एक नाव, मानिकपुर में एक नाव लगाई गई है। डिघिया गेज पर नदी का जलस्तर 71.17 मीटर से घटकर रविवार की शाम 71.04 मीटर रिकार्ड किया गया।

भाजपा की नीतियां किसानों के लिए हितकारी

इलाहाबाद, भारतीय जनता पार्टी किसान मोर्चा के नवनियुक्त प्रदेश महामंत्री रमेश पांडेय ने कहा कि भाजपा की नीतियां किसानों के लिए हितकारी हैं। भाजपा ने चुनावी वायदे के मुताबिक किसानों का कर्ज माफ किया है। किसान मोर्चा का प्रदेश महामंत्री बनाए जाने के बाद रमेश पांडेय का कल फूलपुर में यहा जोरदार स्वागत हुआ। प्रतापपुर विधानसभा क्षेत्र के निवासी किसान मोर्चा के पूर्व मंत्री व पूर्व प्रदेश उपाध्यक्ष रमेशचंद्र पांडेय को उत्तर प्रदेश किसान मोर्चा का प्रदेश महामंत्री नियुक्त किया गया है। प्रदेश अध्यक्ष राजा वर्मा ने उन्हें यह महत्वपूर्ण दायित्व सौंपा है। पांडेय के आवास पर किसानों व कार्यकर्ताओं ने पहुंचकर माल्यार्पण कर उनका स्वागत करते हुए उन्हें बधाई दी। श्री पांडेय ने इसके लिए प्रदेश अध्यक्ष महेन्द्र नाथ पांडेय का भी आभार व्यक्त किया है। इस अवसर पर शोभनारायण द्विवेदी, वेदेश

दत्त पांडेय, कृष्ण दास गुप्ता, कन्हैया लाल प्रजापति, राम नवल पटेल, राकेश सिंह, पुरुषोत्तम मौर्य, वेदपति पांडेय, रामचन्द्र पटेल, आशाराम तिवारी, कमला प्रसाद पांडेय, विजय शंकर, ब्रह्मा तिवारी, बाबुल नाथ त्रिपाठी, विनोद पांडेय, विभव नाथ भारती, श्याम बिहारी पांडेय, सभाजी मिश्र आदि उपस्थित थे।

तीन तलाक महिलाओं के लिए अभिशाप-शबाना आजमी

जौनपुर, अभिनेत्री व पूर्व सांसद शबाना आजमी सोमवार को मोहम्मद हसन कालेज पहुंची। उन्हें देखकर वहां पर लोग बेहद उत्साहित हो उठे। शबाना ने भी गर्मजोशी के साथ सभी का अभिवादन किया। इस मौके पर शबाना ने कहा कि तीन तलाक महिलाओं के लिए अभिशाप है। मुस्लिम देशों ने भी इसकी मान्यता खत्म कर दी है। अफसोस की बात है कि भारत जैसे लोकतात्रिक देश में अभी तक इसको मान्यता मिली है ये चिंता का विषय है। शबाना आजमी ने कहा महिलाओं के अधिकार के लिए सभी को आगे आना होगा। तभी महिलाओं का विकास हो सकेगा। देश में महिलाओं के साथ लगातार अपराध हिंसा, दुर्ष्क हो रहे हैं। इन घटनाओं का पुरजोर विरोध जरूरी है। विश्वविद्यालय में

बन रहे कैफी संचार भवन को पूरा न होना दुखद है। सभी को अभियान चलाकर इसके निर्माण के लिए दबाव बनाना चाहिए। कैफी आजमी, राहुल साकृत्यायन सहित कई विद्वानों को उन्होंने देश की पहचान बताते हुए कहा कि इनका वजूद कायम रहना चाहिए। इस दौरान उन्होंने इन विद्वानों के जीवन पर प्रकाश डाला। उनकी रचनाओं पर चर्चा की। देश और समाज में उनकी उपयोगिता के बारे में विस्तार से बताया। इस दौरान अभिनेत्री और पूर्व सांसद शबाना आजमी ने नारी सशक्तीकरण को बढ़ावा देने और युवाओं को देश के विकास में रचनात्मक सोच रखते हुए बेहतर काम करने का आह्वाहन किया। कहा कि ऐसे सराहनीय काम करने वालों के लिए पूरी फिल्म इंडस्ट्री खड़ी है, हरसंभव सहयोग किया जाएगा। उन्होंने कहा प्रतिभा को मंच जरूर मिलता है। उन्होंने यहां जिम और योगा सेंटर का उद्घाटन किया।

देवरिया शेल्टर होम कांड व राफेल सौदे पर कांग्रेसजनों का विरोध प्रदर्शन

चंदौली, प्रातीय आह्वान पर शहर कांग्रेस कमेटी ने कल भाजपा सरकार पर हमला बोला। देवरिया में शेल्टर होम काड एवं राफेल सौदे को सरकार की नाकामी बताते हुए धरना प्रदर्शन किया। भाजपा सरकार के खिलाफ जमकर नारेबाजी की और विरोध प्रदर्शन को जनादोलन का शक्ल देने की बात कही। विरोध प्रदर्शन में दर्जनों कार्यकर्ता शामिल हुए और सरकार विरोधी नारे लगाए। इस मौके पर कांग्रेसी शहर अध्यक्ष रामजी गुप्ता के नेतृत्व में नेहरू पार्क में कार्यकर्ता जमा हुए। सभा में रामजी गुप्ता ने कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए कहा कि देवरिया के शेल्टर होम में सामने आया घिनौना कृत्य उत्तर प्रदेश सरकार की नाकामी का परिचायक है। हैरत इस बात की हो रही कि स्मृति ईरानी, सुषमा स्वराज के साथ प्रधानमंत्री व योगी आदित्यनाथ भी चुप्पी साधे हैं।

सूबे में हरदोई, प्रतापगण सहित कई जिलों में दिल को दहला देने वाली घटनाएं सामने आ रहीं हैं। महिलाओं के साथ अत्याचार बढ़ता जा रहा है। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ का नारा देने वालों की सरकार में मासूम बेटिया असुरक्षित हैं। आरोप लगाया कि यूपीए की सरकार में जो राफेल हवाई जहाज 520 करोड़ का था, उसे आज 1680 करोड़ में खरीदा जा रहा है। अध्यक्षता रामजी गुप्ता व संचालन शाहिद तौसिफ ने किया। बृजेश गुप्ता, दशरथ चौहान, सतपाल सिंह, कन्हैया केशरी, जयकुमार काशवानी, डा. आनंद श्रीवास्तव, नन्दगोपाल सिंह, विजय कुमार गुप्ता , शाहिद तौसिफ, संजय मिश्रा, नवीन पांडेय, नेहाल अख्तर, तेजपरकाश मल्लिक, राकेश सिंह, सलमान, रुपेश कुमार, रंजीत जायसवाल, रमेश पांडेय, सुनील विश्वकर्मा, सुल्तान महेश मंडल, जयप्रकाश पटेल, रुपेश कुमार चौहान आदि लोग उपस्थित थे।

पात्रों को लाभ दिलाने की बनी रणनीति

बस्ती, गौर विकास खंड के ग्राम पंचायत हथिनाश में ग्राम सभा की खुली बैठक हुई। दिव्यांग, विधवा, वृद्धा पेंशन, खाद्य सुरक्षा योजना से वंचित पात्रों को लाभ दिलाने की योजना पर चर्चा कर रणनीति तैयार हुई। शेष बचे घरों में शौचालय बनवाने को लेकर ग्रामवासियों को प्रेरित किया गया। पंचायत में होने वाले विकास कार्यों पर भी योजना बनाई गई। अध्यक्षता करते हुए प्रधान प्रतिनिधि दीनदयाल मिश्र ने ग्रामीणों को शौचालय बनाने के लिए प्रेरित करते हुए कहा कि प्रधानमन्त्री नरेंद्र मोदी ने स्वच्छ भारत का जो सपना देखा है उसे हम सब मिलकर पूरा करके वर्ष 2019 में महात्मा गांधी की 150वीं जयंती पर अपनी सर्वोत्तम श्रद्धांजलि दे सकते हैं। सचिव प्रशांत पांडेय ने कहा ग्राम पंचायत हथिनाश के राजस्व गांव कोइलपुरा, अर्जुनडीहा को खुले में शौच मुक्त घोषित किया जा चुका है। सहजानंद मिश्र,अभिराम, गोमती प्रसाद, जनार्दन शुक्ल, बबलू पांडेय, रजनीश मिश्र, रंगनाथ, श्रवण कुमार फौजदार, मोतीराम, जगराम, राकेश चौधरी मौजूद रहे।

नहाने गया युवक घाघरा नदी में डूबा

टांडा (अंबेडकरनगर), उफनाती घाघरा नदी में नहाने उतरा युवक डूब गया। पुलिस व राजस्व विभाग के अधिकारी मौके पर स्थानीय गोताखोरों की मदद से युवक की तलाश में जुटे हैं। घटना रविवार की दोपहर की बताई जा रही है। आलापुर थाना क्षेत्र के पिपरा हिसमुद्दीनपुर गांव का रहने वाला युवक श्यामू (२२) पुत्र राम भुवाल अपने दो साथियों के साथ थाना हंसवर क्षेत्र के घाघरा नदी के मयंदी घाट पर नहाने गया था। इस दौरान वह गहरे पानी में चला गया। श्यामू तैरना नहीं जानता था और पानी में डूब गया। सूचना पर पुलिस और राजस्व विभाग के अधिकारी स्थानीय गोताखोर अभय मांझी, सुरेंद्र मांझी की टीम युवक को नदी में ढूढ़ने के लिए उतरी हैं। तहसीलदार मेवालाल ने बताया कि युवक एक निजी बस का क्लीनर था। तैरना नहीं जानता था और नदी में नहाते समय डूब गया।

सीएम ने वीसी को दिया मदद का भरोसा

बलिया, जननायक चंद्रशेखर विश्वविद्यालय से संबद्ध कालेजों की संख्या बढ़ाने व अन्य आधारभूत संरचनाओं के विकास के लिए प्रयास तेज हो गए हैं। विवि के कुलपति प्रो.योगेंद्र सिंह ने मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ से लखनऊ में मुलाकात की। मुख्यमंत्री ने विवि के विकास को हर सम्भव मदद देने का भरोसा दिया है। कुलपति प्रो.योगेंद्र सिंह ने बताया कि मुख्यमंत्री से लखनऊ में सार्थक वार्ता हुई। मैंने सीएम से विश्वविद्यालय के समग्र विकास तथा गाजीपुर व मऊ जनपद के कालेजों को जननायक चन्द्रशेखर विश्वविद्यालय बलिया से सम्बद्ध किए जाने हेतु अनुरोध किया। कहा कि मुख्यमंत्री खुद ही विवि के विकास पर नजर बनाए हुए हैं। वहीं कुलपति ने अपर सचिव उच्च शिक्षा

संजय अग्रवाल से भी मुलाकात की थी। उन्होंने विवि परिसर में कक्षाओं के संचालन के लिए पदों का सृजन, विवि के कार्यक्षेत्र को विस्तारित करने आदि मांगें रखी थी। इस पर अपर सचिव ने समस्याओं के समाधान के लिए आश्वासन दिया। कुलपति ने कहा कि यदि जननायक चंद्रशेखर विवि से गाजीपुर व मऊ जिले जुड़ जाएंगे तो वहां के लोगों को सहूलियत होगी।

पुलिस ने तमंचा फैक्ट्री का किया पर्दाफाश, २ शातिर गिरफ्तार

कौशांबी, करारी थाना क्षेत्र के अमुरा गांव में दबिश देकर पुलिस ने तमंचा फैक्ट्री का भंडाफोड़ किया। इस बीच दो शातिरों को गिरफ्तार करते हुए तमंचा, कारतूस व उपकरण भी बरामद किया गया। पकड़े गए आरोपितों के खिलाफ पुलिस ने केस दर्ज कर लिया है। इंस्पेक्टर अर्जुन सिंह रात गश्त पर थे। इस बीच मुखबिर की सूचना पर उपनिरीक्षक अशोक कुमार सिंह, धर्मेंद्र कुमार वर्मा, सिपाही विष्णुपाल सिंह, विभूति शंकर त्यागी व सूरज प्रताप सिंह के साथ इंस्पेक्टर ने अमुरा गांव में दबिश दी। इस दौरान उन्होंने एक घर में संचालित तमंचा फैक्ट्री का भंडाफोड़ किया। पुलिस को देखते ही वहां मौजूद दो युवक भागने लगे। सिपाहियों ने घेराबंदी करते हुए दोनों को धर-दबोचा। पकड़े गए युवकों ने अपनी शिनाख्त मोहम्मद शाहिद पुत्र सादिक निवासी अमुरा व गुफरान पुत्र बिक्कन निवासी सालेपुर के रूप में दी। पुलिस ने चार तमंचा, तीन कारतूस व तमंचा बनाने के उपकरण बरामद किए। पकड़े गए आरोपितों के खिलाफ केस दर्ज कर पुलिस ने चालान न्यायालय भेजा।

बावरिया गिरोह के दो सदस्यों को जीआरपी ने किया गिरफ्तार

जौनपुर, राजकीय रेलवे पुलिस ने लूट व चोरी करने वाले शातिर बावरिया गिरोह के दो सदस्यों को गिरफ्तार किया है। इनके पास से छह कारतूस, चाकू, दो जोड़ी पायल,

2500 रुपए व चोरी में इस्तेमाल होने वाले अत्याधुनिक उपकरण बरामद हुए हैं। जौनपुर जंक्शन जीआरपी थाना प्रभारी निरीक्षक अतुल्य कुमार पांडेय के निर्देशन में एसआई रणजीत कुमार श्रीवास्तव, चौकी प्रभारी जीआरपी शाहगंज हरिकेश राम आजाद व सहयोगी जवान रविवार को स्वंतत्रता दिवस के मद्देनजर सुरक्षा व्यवस्था के लिए संदिग्ध व्यक्तियों व वस्तुओं की चेकिंग कर रहे थे। तभी मुखबिर ने सूचना दी कि किसी गंभीर आपराधिक योजना को अंजाम देने के इरादे से शातिर बावरिया गिरोह के दो सदस्य प्लेटफार्म नंबर दो व तीन के पास स्थित शिव मंदिर के पीछे मौजूद हैं। पुलिस टीम ने घेराबंदी कर दोनों को धर दबोचा। गिरफ्तार आरोपियों में बबलू निवासी ईशापुर व गंगा सिंह निवासी मिलकियां थाना निगोही जिला शाहजहांपुर हैं। विभिन्न धाराओं के तहत छह मुकदमे दर्ज कर आरोपितों का चालान कर दिया गया। गिरफ्तारी व बरामदगी करने वाली टीम में कांस्टेबल हिफजुर्रहमान, राजेंद्र यादव, शंभूनाथ, सुशील त्रिपाठी, सुशील यादव, सत्यपाल सिंह यादव, पवन कुमार अकेला रहे।

देवर ने भाभी-भतीजी को चाकू मारा, घायल

अंबेडकरनगर, कोतवाली अकबरपुर क्षेत्र में मामूली विवाद को लेकर देवर ने भाभी और भतीजी पर चाकू से हमला कर दिया। हमले में मां बेटी गंभीर रूप से घायल हो गईं। मामला उक्त थाना क्षेत्र के जोगापुर गांव का है। गांव निवासी दयाराम का पुत्र रविवार को घर में खेल रहा था। इस दौरान किसी गलती को लेकर उसके चाचा शौकीलाल ने उसकी पिटाई कर दी। पुत्र को बचाने पहुंची मां मनीषा को देवर से विवाद हो गया। जिसके उपरांत देवर ने चाकू से भाभी पर हमला कर दिया। चाकू के प्रहार से वह गंभीर रुप से घायल हो गई। इस दौरान मां को बचाने के लिए पहुंची बेटी अंशिका पर भी चाचा ने प्रहार कर दिया। हमले में दोनों गंभीर रूप से घायल हो गईं। वारदात को अंजाम देने के उपरांत आरोपी भाग निकला। सूचना पर एंबुलेंस कर्मियों ने उन्हें जिला चिकित्सालय में भर्ती कराया। जहां हालत नाजुक देख चिकित्सकों ने मनीषा को प्राथमिक उपचार के उपरांत ट्रामा सेंटर लखनऊ रेफर कर दिया।

सिंचाई विभाग की कारगुजारियों की रिपोर्ट तलब

गोंडा, भिखारीपुर-सकरौर रिंग बांध नदी में जलस्तर कम होने के बाद भी कट गया, ऐसा तब जब मई से अफसर लगातार तटबंध की स्थिति पर सवाल उठा रहे थे और सिंचाई विभाग के अफसर सब कुछ आल इज वेल होने का दावा करते रहे। शुक्रवार को अचानक टूटे तटबंध ने विभाग ही नहीं सिस्टम पर भी सवालिया निशान खड़े कर दिए। फिलहाल, डीएम ने सिंचाई विभाग के कारगुजारियों की पूरी रिपोर्ट एसडीएम तरबगंज से मांगी है। बाढ़ की विभीषिका से कर्नलगंज व तरबगंज तहसील की आबादी को बचाने के लिए सिंचाई विभाग ने तटबंध बना रखे हैं, लेकिन ये तटबंध कमाई का जरिया बने हुए हैं। करीब एक लाख आबादी को बाढ़ से बचाने के लिए 22.600 किलोमीटर की लंबाई में भिखारीपुर-सकरौर तटबंध बनाया गया था। तटबंध के निगरानी की जिम्मेदारी पहले बाढ़ कार्यखंड सिद्धार्थनगर के पास थी। मई में ही ये तटबंध बाढ़ कार्यखंड गोंडा के हवाले कर दिया गया। लेकिन तटबंध की मरम्मत को लेकर अभी कवायद सिर्फ कागजों में

चलती रही। एसडीएम के निरीक्षण में भी तटबंध की स्थिति खराब पाई गई थी। विधायक प्रेमनरायन पांडेय ने भी पत्र लिखा था। इसके बावजूद सिंचाई विभाग के अफसरों ने कोई संजीदगी नहीं दिखाई। मानसून की दस्तक के बाद टेंडर फाइनल हो सके। नतीजा यह रहा कि तटबंध टूट गया और पानी ने गांवों में दस्तक दे दी। डीएम कैप्टन प्रभांशु श्रीवास्तव ने भिखारीपुर-सकरौर तटबंध का निरीक्षण करके जायजा लिया। तटबंध को लेकर निरीक्षण रिपोर्ट व मरम्मत को लेकर एसडीएम तरबगंज सौरभ भट्ट से पूरी रिपोर्ट मांगी गई है।

बरसात से गिरा मकान, तीन लोग हुए जख्मी

सिद्धार्थनगर, खेसरहा थाना क्षेत्र के ग्राम पंचायत बदुरगहना में स्थित खपरैल मकान का एक हिस्सा देर रात गिर गया। इस घटना में परिवार की एक बच्ची समेत तीन सदस्य जख्मी भी हो गए। रात के समय मकान गिरने की जोरदार आवाज से पूरा गांव जग गया। सभी आवाज की दिशा में भागे तो पता चला रामायण के मकान का हिस्सा धराशायी हुआ है। बीती रात दो दिनों तक हुई बरसात के बाद ग्राम निवासी राम नारायण का मकान अचानक गिर गया। जिस समय यह हादसा हुआ उस समय परिवार के सभी सदस्य गहरी नींद में खपरैल के उसी मकान में सो रहे थे। गनीमत थी कि मकान का जो हिस्सा धराशायी हुआ वह परिजनों से थोड़ी दूर था पर मकान में लगी लकड़ियां इन सभी के ऊपर ही आकर गिरी। इससे रामनारायण (७५) के हाथ टूट गया और काजल (१४) के सर में गंम्भीर चोट लग गयी । जबकि गेंदा (६०) के पैर में हल्की चोट आयी है। ग्रामीणों के सहयोग से सभी घायलों को नजदीकी स्वास्थ केन्द्र खेसरहा पहुंचाया गया जहां इलाज चल रहा है। ग्रामीणों का कहना था कि यदि घर के लोग इस मकान में सोए होते तो गंभीर हादसा होने से इंकार नहीं किया जा सकता।

प्रधान के प्रयास से मिला गायब रास्ता

घोसी (मऊ), इस पावन सावन माह में भोले बाबा ने कोपागंज से नौसेमर मंदिर में दर्शन एवं पूजन अर्चना को जाने वाले श्रद्धालुओं को स्थाई सौगात दी है। इस सौगात के माध्यम बने हैं जिलाधिकारी से लेकर गांव के लेखपाल और सहरोज की प्रधान पूनम राय एवं उनके प्रतिनिधि योगेश राय जिनकी कोशिश से 125 मीटर लंबा मार्ग वापस मिल गया। सहरोज गांव के पश्चिम स्थित नौसेमर मंदिर तक एक पिच सड़क जाती है। गांव के बाहर होते ही इस पिच से एक रास्ता बांध पर बने प्रथम पुल के समीप से निकल कर घूमते हुए कोपागंज जाता है। रास्ता कहीं पिच तो कहीं इंटरलाकिंग है। चकबंदी अभिलेखों में पुल के समीप उर्मि स्थल पर सड़क गायब हो गई जबकि 125 मीटर आगे जाने पर सड़क की चौड़ाई वास्तविक चौड़ाई से दो गुनी हो गई। प्रधान पूनम राय एवं प्रतिनिधि योगेश ने जिलाधिकारी के समक्ष गुहार लगाया। इसे संज्ञान लेते हुए एसडीएम सदर अनूप कुमार, तहसीलदार मिथिलेश तिवारी, राजस्व निरीक्षक देवेंद्र यादव एवं लेखपाल रामअशीष सिंह ने संबंधित प्रभावित चकदार को सड़क की चौड़ाई एक समान कम करने को समझाया गया। चकदार ने भी उदारता का परिचय देते हुए इसे स्वीकार कर लिया। पंचायत कोपागंज क्षेत्र से आने वाले कांवरियों की सुविधा के मद्देनजर खड़ंजा लगवा रही है। ग्रामीण इंदुशेखर राय, वीरेंद्र यादव, अजीत राजभर, अरुण राय, संजीव राय, शशि राय एवं सोनू राय ने इस पहल को सराहा है।

कैनाल में मिला मासूम का शव

संतकबीर नगर, सामान खरीदने के लिए महुली थानाक्षेत्र के नोकता गांव से निकला पांच वर्षीय बालक जब काफी देर तक घर वापस नहीं लौटा तो चिंता में पड़े परिजनों ने बालक की तलाश शुरु की। खोजबीन करने पर मुखलिसपुर पंप कैनाल में बालक का शव दिखा। यह दृश्य देख परिवार के सदस्य रोने-बिलखने लगे। गांववासियों के समझाने-बुझाने पर ये शव को लेकर घर आए । घटनास्थल पर काफी देर बाद भी मुकामी थाने की पुलिस नहीं पहुंची थी। महुली थाना क्षेत्र के नोक्ता गांव के निवासी सिद्धू का पांच वर्ष का बेटा रितेश गांव की दुकान से कुछ सामान लेने की बात कहकर रविवार को दोपहर के समय घर से निकला।

एक हत्यारा गिरफ्तार, मुख्य आरोपित फायर कर फरार

गाजीपुर, आरएसएस कार्यकर्ता व पत्रकार राजेश मिश्र का हत्यारोपी मटखन्ना गांव निवासी गोवर्द्धन उर्फ मंटू यादव आखिरकार कल रात पुलिस के हत्थे चढ़ गया। यह कामयाबी पुलिस टीम को चाड़ीपुर तिराहे से पांच सौ मीटर दूर मिली। हालांकि इस दौरान मुख्य आरोपित व 50 हजार का इनामी राजू यादव पुलिस टीम पर फायर झोंककर भागने में सफल रहा। पकड़े गए बदमाश के पास से एक पिस्टल, दो जिंदा कारतूस व एक बाइक बरामद हुई। एसपी यशवीर सिंह पकड़े गए आरोपित को मीडिया के सामने पेश किए, जहां से उसे जेल भेज दिया गया। एसपी ने बताया कि राजू यादव व मंटू यादव की गिरफ्तारी के लिए क्राइम ब्रांच की टीम के अलावा करंडा पुलिस को लगाया गया था। क्राइम ब्रांच प्रभारी रवींद्र भूषण मौर्य अपने साथी संजय कुमार पटेल, राणा प्रताप सिंह, भाईलाल सोनकर, दिनेश यादव, धनंजय सिंह आदि के साथ दोनों की गिरफ्तारी के लिए रात के पहर करंडा क्षेत्र में भ्रमणशील थे। इसी बीच चाड़ीपुर तिराहे के पास वाहन चेकिंग करते करंडा थानाध्यक्ष त्रिवेणी लाल सेन मिल गए। इसी दौरान मुखबिर से सूचना मिली कि दो बदमाश किसी घटना को अंजाम देने के लिए नंदगंज की ओर क्षेत्र में आ रहे हैं। सूचना के बाद पुलिस टीम घेराबंदी कर दोनों के आने का इंतजार करने लगी। एक बाइक पर सवार दो बदमाश आते दिखाई दिए। पुलिस टीम टार्च जलाकर उन्हें रुकने का इशारा की तो पीछे बैठा बदमाश फायर झोंकने लगा। हालांकि पुलिसकर्मियों ने साहस का परिचय देते हुए दोनों का पीछा शुरू किया तो हड़बड़ी में बाइक एक पेड़ से टकरा गई। पीछे बैठा बदमाश तो भाग निकला लेकिन उसका साथी हत्थे चढ़ गया। पूछताछ में पता चला कि पुलिस को चकमा देकर भागा बदमाश राजू यादव है।

सूरत। कथित तौर पर बिजेपी साशन काल में हुए मुंगफली खरीद घोटाले को लेकर सोमवार को गांधी प्रतिमा के निकट चौक बाजार में कांग्रेस के कार्यकर्ताओं द्वारा धरना प्रदर्शन किया गया।

डिंडोली में लूट और मर्डर के चार संदिग्ध गिरफ्तार

सूरत। शुक्रवार को देर रात डिंडोल फ्लाय ओवरब्रिज के नीचे अयोध्यानगरी सोसायटी के सामने एक युवक की हत्या की गई थी। इस लूट व मर्डर प्रकरण में डिडोली पुलिस ने चार संदिग्धों को गिरफ्तार कया है लेकिन अभी तक आरोपी के संदर्भ में सुनिश्चित कड़ी हाथ नही लगी है।

सूत्रों से प्राप्त जानकारी के अनुसार शुक्रवार देर रात 12 बजे से 1 बजे के बीच डिंडोली फ्ला ओवर ब्रिज के नीचे बीपिन ब्रिजमान उपाध्याय की हत्या हुई थी। बीपिन के पास से 1000 रुपए लूट और उसकी हत्या कर लूटेरे फरार हो गये थे। इस घटना के संदर्भ में बीपिन के बहनोंई द्वारा डिंडोली पुलिस में हत्या-लूट की शिकायत दर्ज कराये जाने के बाद पुलिस ने जांच शरु की है। घटना स्थल के आसपास की दुकानों के सीसीटीवी फुटेज चेक करने पर पुलिस को मिली फुटेज के आधार पर पुलिस ने करीब चार संदिग्धों को गिरफ्तार कर सघन पूछताछ शुरु की है। हालांकि अभी तक सुनिश्चित आरोपियों के संदर्भ में कोई ठोस जानकारी नहीं मिली है। डिंडोली पीआई इस मामले की सघन जांच कर रहे है।

वाघाणी के नेतृत्व में २१ अगस्त तक अभियान

अब १५ अगस्त से बीजेपी सदस्यता वृद्धि अभियान

सूरत। बीजेपी के प्रदेश प्रवक्ता भरत पंड्या ने आज बताया कि १५ अगस्त से पुरे गुजरात में बीजेपी सदस्यता वृद्धि अभियान की शुरुआत होने जा रही है। उन्होंने कहा कि गुजरात में बीजेपी संगठन सर्वव्यापी और सर्वस्पर्शी संगठन बन चुका है। संगठन का विस्तार लगातार हो रहा है। बीजेपी संगठन की परंपरा के अनुसार हर तीन साल में सदस्यता रजिस्टर्ड से संबंधित कार्यक्रम किये जाते है। इसके तहत ही एक बार फिर १५ अगस्त से २१ अगस्त तक पुरे गुजरात के ४१ जिलो में सदस्यता वृद्धि अभियान चलाया जाएगा। बीजेपी के प्रदेश अध्यक्ष जीतुभाई वाघाणी के नेतृत्व में यह सदस्याता वृद्धि अभियान चलाया जाएगा। भरत पंड्या ने बताया कि १५ अगस्त से सदस्यता वृद्धइ अभियान का गुजरात के शक्ति केन्द्रो से प्रारंभ होगा। प्रदेश अध्यक्ष जीतुभाई वाघाणी-भावनगर, केन्द्रिय मंत्री और राष्ट्रीय उपाध्यक्ष पुरुषोत्तम रुपाला-अमरेली, प्रदेश संगठन महामंत्री भीखुभाई दलसाणीया-गांधीनगर, केबिनेट मंत्री आर. सी. फलदु-सुरेन्द्रनगर, केबिनेट मंत्री जयेश रादडिया-राजकोट में उपस्थित रहकर सदस्यता वृद्धि अभियान की शुरुआत करायेंगे। एक सप्ताह के इस अभियान में जिला महानगर के लोग भी शामिल होंगे। इसके अलावा अलग अलग शक्ति केन्द्रो पर उपस्थित रहकर अलग अलग मोरचा के अग्रणी लीडर भी सदस्यता वृद्धि अभियान का प्रारंभ करायेंगे। भरत पंड्या ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी, राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह के नेतृत्व में बीजेपी आज दुनिया की सबसे बड़ी राजनैतिक पार्टी बन चुकी है। लोक कल्याणकारी नीतियों और जनभावनाओं के साथ सक्रिय कार्यकर्ता बीजेपी संगठन को और अधिक मजबूत बना रहे है। जिसके चलते बीजेपी का जनाधार भी लगातार बढ़ रहा है। भारत में २० से भी अधिक राज्यो में बीजेपी के सरकारे सेवा के मंत्र के साथ चल रही है। गुजरात में बीजेपी एक करोड़ से अधिक सदस्य संख्या के साथ है।

टेक्सटाइल मार्केटों में फ्री पार्किंग को लेकर टेम्पो चालको की हडताल खत्म

सूरत, फेडरेशन ऑफ सूरत टेक्सटाइल ट्रेडर्स एसोसियेशन (फोस्टा) के अग्रणियों ने आज पुलिस कमिश्नर सतीष शर्मा के साथ कपडा मार्केट में फ्री पार्किंग को लेकर मीटिंग आयोजित की। इस मीटिंग में पुलिस और व्यापारियों की ओर से फोस्टा के बीच तीन मामलों को लेकर हुआ समाधान हुआ। पुलिस कमिश्नर ने कहा कि हाईकोर्ट के आदेशानुसार कपडा मार्केट की मुलाकात पर आनेवाले लोगों को फ्री पार्किंग देना ही होगा और इस नियम का उलंघन करनेवाला चाहे कितना भी बडा व्यक्ति क्यों न हो उसके खिलाफ पुलिस कार्यवाही करेगी।

फोस्टा के प्रमुख मनोज अग्रवाल ने कहा कि पुलिस कमिश्नर के साथ हुई मीटिंग सकारात्मक थी। व्यापारियों के कारण रिंगरोड पर ट्राफिक जाम हो ऐसा हमारा आशय कभी नहीं रहा। रिंगरोड की ट्राफिक समस्या हल करने के लिए हम सतत प्रयत्नशील रहे हैं। पुलिस कमिश्नर से मिलने गये प्रतिनिधि मंडल में राजेश अग्रवाल, रंगनाथ शारदा, जयलाल सहित के अग्रणी हाजिर रहे।

कपडे का पार्सल लेकर आनेवाले टेम्पो चालको को एक घंटे पार्किंग देना होगा लेकिन शर्त यह होगी कि कपडे का माल उसी मार्केट के व्यापारी का होना चाहिए। किसी मार्केट ने उसके मार्केट के पार्किंग के अलावा अलग से पार्किंग के लिए जगह ली होगी तो वह पे एन्ड पार्क के लिए उपयोग कर सकेगा। मार्केट में वाहन पार्किंग के एक घंटे बाद भी कपडा भरा टेम्पो पडा रहा तो मार्केट एसोसियेशन पुलिस को शिकायत कर सकेगा और पुलिस अनावश्यक रुप से पार्किंग की जगह घेरनेवाले के खिलाफ कार्यवाही करेगी।

चेइन स्नैचिंग के गुनाहों को रोकने की दिशा में बड़ा कदम

चेन स्नैचिंग के गुनाह में अब पांच से १० साल की सजा होगी

कड़ी सजा के अलावा दंड भी किया जाएगा : सरकार अध्यादेश के द्वारा नई व्यवस्था लागू करेगी : सरकार के कड़े फैसले से महिलाएं खुश हुई

अहमदाबाद। राज्य में महिलाओं की सुरक्षा और अधिक पुख्ता करने के इरादे के साथ गुजरात सरकार ने आज महत्वपूर्ण फैसला लेते हुए चेन स्नैचिंग के मामले में पांच से दस साल की सजा सुनाने का फैसला किया है। चेन स्नैचिंग के गुनाह में अब दोषितो को कड़ी सजा होगी। सरकार इस मामले में कुछ ही दिनो में अध्यादेश लाने के लिए तैयारी कर चुकी है। अध्यादेश लाकर राज्यभर की महिलाओं को अधिक सुरक्षा दी जाएगी। गुजरात सरकार के इस फैसले से महिलाओं में खुशी की लहर दौड गई है। गुजरात सरकार इन दिनो एक के बाद एक बड़े फैसले ले रही है। अब चेन स्नैचिंग के गुनाह में चेइन स्नेचींग करनेवाले शख्स को पांच से १० साल की सजा दी जाएगी। इसके अलावा २५ हजार रुपये का दंड भी किया जाएगा। राज्य के गृहमंत्री प्रदिपसिंह जाड़ेजा ने इस बारे में आज जानकारी दी। उन्होंने कहा कि यह नई व्यवस्था सरकार कुछ ही दिनो में अध्यादेश के द्वारा जारी करेगी और राज्यभर की महिलाओं को अधिक सुरक्षा दी जाएगी। महिलाएं कोई भी भय के बिना बहार निकल सके इस उद्देश्य के साथ यह निर्णय किया गया है। चेन स्नैचिंग के दौरान गुनेगार यदी किसी को चौट पहुंचाये या किसी की मौत हो जाए तो इस मामले में और अधिक कठोर सजा की जाएगी। चेन स्नैचिंग के दौरान मृत्यु या चौट पहुंचाने के प्रयास में कमसे कम सात साल से लेकर १० साल की सजा की जाएगी। राज्य सरकार के इस ऐतिहासिक फैसले को लेकर महिलाए खुश दिखाई दे रही है। जाडेजा ने कहा कि महिलाओं को सुरक्षा देना राज्य सरकार की प्राथमिकता है। पहले भी इस तरह के कदम उठाये गए है। अब भी उठाए जा रहे है। मंगलसूत्र, चेइन और अन्य किंमती आभूषण पहनकर महिलाएं निकलती है किन्तु कभी कभाड चेइन स्नेचींग के किस्से बन रहे है। जिसके चलते महिलाओं में भी दहशत का माहोल रहा है। किन्तु अब चेइन स्नेचींग के गुनाह में भी कड़ी सजा की जाएगी। आईपीसी की कलम के तहत चोरी के गुनाह में तीन साल की सजा और दंड की व्यवस्था है किन्तु अब इस सजा को बढ़ाकर और अधिक कड़ी कर दी गई है। जिसके अनुसार चेइन स्नेचींग समेत कीमती आभूषण और अन्य चीजो की जोरी के केस में पांच साल और अधिक से अधिक १० साल की सजा होगी। इस के अलावा २५ हजार रुपये का दंड होगा। चेन स्नैचिंग समेत की वस्तु की चोरी करनेवालों को सात साल की जेल और २५ हजार का दंड किया जाएगा। कलम ३७९ (क), ४ के तहत चेन स्नैचिंग के प्रयास के दौरान यदी कोई व्यक्ति को चौट पहुंचती है या चौट का भय दिखाया जाता है तो तीन साल की कठोर सजा की जाएगी। इसके अलावा चेन स्नैचिंग से किसी की मौत होने के केस में भी कड़ी सजा की जाएगी। सरकार की ओर से कैबिनेट मिटींग में इस निर्णय को लेकर संमति बन चुकी है।

अहमदाबाद में मलेरिया के ११ दिन में ५२० केस

अहमदाबाद। मोनसून की सिजन चल रही है तब अहमदाबाद शहर में म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन की ओर से मच्छरजनीत और जलजनित रोगों को रोकने के लिए अलग अलग कदम उठाए जा रहे हैं फिर भी शहर के अलग अलग जोन में मच्छरजनीत और जलजनित केस सतह पर आ रहे है। अहमदाबाद शहर में साधारण मलेरीया के अगस्त महिने में पिछले ११ दिनो में ही ५२० केस दर्ज हुए है। दुसरी ओर जहरीले मलेरिया के पिछले ११ दिनो में ही ८४ केस दर्ज हुए हैं। दुसरी और जलजनित रोग की बात कि जाए तो अगस्त महिने में पिछले ११ दिनो में ही उल्टी-दस्त के ३७८, पीलिया के २१४, टाइफोइड के २२९ और कोलेरा के १३ केस सतह पर आए है। अगस्त २०१८ में शाहपुर, सरसपुर, नरोडा, कुबेरनगर, थलतेज, निकोल, रामोल, अमराइवाडी-२, वटवा, इन्द्रपुरी, वासणा वोर्ड में कोलेरा के १३ केस दर्ज होने से सनसनी फैल गई है।

एटीएस के मार्गदर्शन में जांच की जाएगी

ड्रग्स का उपयोग बढ़ा : अब स्कुल-कॉलेजो में चैकिंग

स्पेशियल ऑपरेशन ग्रुप की ओर से कार्रवाई होगी : झा

अहमदाबाद। राज्य में युवा पीढ़ी में ड्रग्स का सेवन बढ़ रहा है। इस बारे में चौंकानेवाली जानकारी सतह पर आने के बाद सरकार और अधिक कड़ी कार्रवाई करने की दिशा में बढ़ रही है। सरकार ने अब जांच के आदेश दे दिये है। राज्य की स्कुल और कॉलेजो में इस दिशा में जांच की जाएगी। एटीएस के मार्गदर्शन के तहत एसओजी की ओर से कार्रवाई की जाएगी। राज्य के पुलिस महानिर्देशक शिवानंद झा ने इस बारे में घोषणा कर दी है। युवा पीढी में नशे की चीजो का सेवन बढ़ रहा है। इस तरह के केस बढ़ रहे है। जिसके चलते अब राज्य सरकर भी और अधिक सक्रिय दिख रही है। गुनाखोरी और नशाबंधी को लेकर गृहराज्यमंत्री प्रदिपसिंह जाडेजा और राज्य के पुलिस महानिर्देशक शिवानंद झा ने पत्रकार परिषद के दौरान बताया कि राज्य में शराबबंदी को और कड़े रुप से लागू किया जा रहा है।

एटीएस के मार्गदर्शन के तहत स्पेशियल ऑपरेशन ग्रुप की ओर से कार्रवाई की जाएगी। हालही में गुजरात में नशे की चीजो के सेवन में बढौतरी हुई है जो चिंता की बात है। स्कुल-कोलेज और स्कुल केम्पस को ड्रग्स फ्री बनाने के लिए एक अभियान चलाया जाएगा। इसके अलावा असरकारक जांच भी की जाएगी। ड्रग्स और मादक चीजो की कालाबाजारी करनेवाले के साथ भी कठोर रुप से कार्रवाई की जाएगी। गुजरात में नार्कोटीक्स कंट्रोल ब्युरो की ओर से बताया गया है कि पिछले पांच सालो के दौरान राज्य के युवाओं में ड्रग्स के उपयोग करने का सीलसीला बढ़ा है। नार्कोटिक्स कंट्रोल ब्युरो के आंकड़े बताते है कि साल २०१३ से लागातार गुजरात में ड्रग्स की रेड में बढौतरी हुई है। साल २०१७ में १० और इसी साल में अबतक छह रेड की जा चुकी है।

शहर के रखियाल इलाके में स्थित चकुडिया महादेव मंदिर में सावन के सोमवार के दिन सुबह से ही श्रद्धालुओं की भारी भीड़ देखने को मिली।

महादेव मीडिया
रोहताश यादव 9924144499, 7015339195
वीजिटिंग कार्ड, बिल बुक, लेटर पैड, बेनर, पोस्टर, आदि का डिजाइन बनवाने के लिए संपर्क करें। (हिन्दी, गुजराती)
हिन्दी, गुजराती न्युज पेपर डिजाईन करवाने के लिए संपर्क करें।
304 केवल कॉम्पलेक्ष नवा गाम, डिंडोली, उधना सूरत।

स्वामी, मुद्रक व प्रकाशक सुरेश मौर्या द्वारा अष्ट विनायक ऑफसेट एफपी. 149, प्लोट 26 खोडियार नगर, सिद्धीविनायक मंदिर के पास, (भाटेना) हॉ.सो. अंजना सूरत, गुजरात से मुद्रित, एवं 191 महादेव नगर, हरि नगर-2 के पीछे, उधना, जिला-सूरत, गुजरात से प्रकाशित, **संपादक :- सुरेश मौर्या** फोन नं. (9879141480) **RNI.No. : GUJHIN/2018/75100**, E-mail: krantisamay@gmail.com